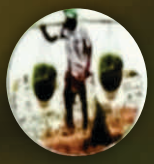

www.kahaar.in

विशिष्ट अंक- जल संरक्षण

ISSN (p): 2394-3912
ISSN (e): 2395-9369
त्रैमासिक 10 (3) जुलाई – सितम्बर, 2023
प्रिंट कापी : रूपये 50/-
ऑनलाइन : रूपये 25/-
Technical Articles are Peer Reviwed

कहार

जन विज्ञान की बहुभाषाई पत्रिका

KAHAAR

A multilingual magazine for common people

प्रकाशक
प्रोफेसर एच्.एस. श्रीवास्तव फाउण्डेशन फॉर साइंस एण्ड सोसाइटी, लखनऊ
(www.phssfoundation.org)
सह-प्रकाशक
पृथ्वीपुर अभ्युदय समिति, लखनऊ (www.prithvipur.org)
बचपन क्रिएशन्स, लखनऊ(www.bachpancreations.com)
सोसायटी फॉर इन्वायरमेन्ट एण्ड पब्लिक हेल्थ (सेफ), लखनऊ

PROF. H. S. SRIVASTVA FOUNDATION FOR SCIENCE & SOCIETY

Office No. 04, 1st Floor, Eldeco &press Plaza, Uttrathia Raebareli Road, Lucknow

Website: www.phssfoundation.org Email: phssoffice@gmail.com

Professor H. S. Srivastava Foundation for Science and Society is a national voluntarily and non-profit organization registered under the society Act 1860 in Lucknow.

A) CENTRE FOR SUSTAINABLE AGRICULTURE AND ENVIRONMENT-

- A Research and Development Centre of the Foundation namely Centre for Sustainable Agriculture and Environment has been established recently to understand the issue and challenger of the economic, social, ecological, and cultural sustainability of our society food systems, developmental processes, natural resources, health, and happiness of the people.
- The Foundation has made provisions for Honorary distinguished, emeritus, senior scientists, and scientists in the centre, who can develop research proposals, in the field of sustainable agriculture, resource management, science communication and training modules for small scale and micro industries suitable for the rural youth. They can take assignments on writing of books, review papers, research paper, popular articles etc. in collaboration with the Centre. Actual expenditure, secretarial assistance and working space will be provided by the Centre for the approved proposals. In addition to basic and translational research proposals, the proposals for science communication amongst college and school students and rural masses can also be submitted from the centre for extra moral funding from government and private funding agencies by the Scientists (PIs).

B) Publication of International Research Journals-

- The Foundation is publishing a monthly research journal Physiology and Molecular Biology of Plants (PMBP; Clarivate JCR Impact Factor 3.5) in collaboration with Springer Nature.
- Another journal in the field of Artificial Intelligence in Agriculture and Environment has been initiated.

C) Conferences, Seminar and Workshops-

- The Foundation is organizing annual national/ International conferences and periodical workshop, seminar and training programmes for scientific interaction and science communication.
- An Annual National Rural Science Congress has been started from 2022 to explore the issues and challenges of sustainable rural development in India.

D) PHSS Foundation Awards-

- Five biennials' national awards are conferred to the distinct achievers in the different fields by the Foundation from 2012.

E) Popular Science Magazine-

- A quarterly Multilingual People Science Magazine Kahaar (www.kahaar.in) and Kahar portal (www.kahaar.org) are published in collaboration with other organizations from 2014 to communicate science in general and concepts and practices of sustainable agriculture and environment in particular for collage and school students and rural youth.

We invite, you all the like-minded people across the age, gender, geography, religion, and profession to join with us and light the lamp for a better tomorrow.

शोध संस्थान विक्षित करने का प्रयास किया है–

सतत कृषि एवं पर्यावरण केंद्र–

- प्रोफेसर एच.एस.श्रीवास्तव फाउंडेशन फॉर साइंस एंड सोसाइटी एक राष्ट्रीय स्वयंसेवी और गैर–लाभकारी संगठन है, जो लखनऊ में सोसाइटी अधिनियम 1860 के तहत पंजीकृत है। हाल ही में संस्था का अनुसंधान और विकास केंद्र सेंटर फॉर सस्टेनेबल एग्रीकल्चर एंड एनवायरनमेंट स्थापित किया गया जिसका उद्देश्य हमारे समाज की खाद्य प्रणालियों, विकास प्रक्रियाओं, प्राकृतिक संसाधनों का विकास, स्वास्थ्य और लोंगो की खुशी, आर्थिक, सामाजिक पारिस्थितिक और और सांस्कृतिक स्थिरता के मुद्दे और चुनौतियों को समझना है।
- फाउंडेशन ने केंद्र में पहले से ही प्रतिष्ठित, एमेरिटस और वरिष्ठ वैज्ञानिकों का प्रावधान किया है, जो सतत कृषि संसाधन प्रभंधन, विज्ञान संचार और ग्रामीण युवाओं के लिए उपयुक्त लघु और सूक्ष्म उद्योगों के लिए प्रशिक्षण मोड्यूल के क्षेत्र में अनुसन्धान प्रस्ताव विकसित कर सकते हैं तथा जो केंद्र के सहयोग से पुस्तक लेखन, शोध पत्र, लोकप्रिय लेख आदि लेखन कार्य भी कर सकते हैं।

अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिकाओं का प्रकाशन–

- फाउंडेशन स्प्रिंगर नेचर के सहयोग से एक मासिक शोध पत्रिका फिजियोलॉजी एंड मॉलिक्यूलर बायोलॉजी ऑफ प्लांट्स (पीएमबीपी; क्लेरिवेट जेसीआर इम्पैक्ट फैक्टर 3.5) प्रकाशित कर रहा है।
- कृषि और पर्यावरण में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के क्षेत्र में एक और पत्रिका शुरू की गई है।

सम्मेलन, सेमिनार और कार्यशालाएँ–

- फाउंडेशन वैज्ञानिक संपर्क और विज्ञान संचार के लिए वार्षिक राष्ट्रीय/अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन और समय–समय पर कार्यशाला, सेमिनार और प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित कर रहा है।
- भारत में सतत ग्रामीण विकास के मुद्दों और चुनौतियों का पता लगाने के लिए 2022 से एक वार्षिक राष्ट्रीय ग्रामीण विज्ञान कांग्रेस शुरू की गई है।

पीएचएसएस फाउंडेशन पुरस्कार–

- फाउंडेशन द्वारा 2012 से विभिन्न क्षेत्रों में विशिष्ट उपलब्धि हासिल करने वालों को 'पांच द्विवार्षिक' राष्ट्रीय पुरस्कार प्रदान किए जाते हैं।

लोकप्रिय विज्ञान पत्रिका–

- एक त्रैमासिक बहुभाषी लोक विज्ञान पत्रिका कहार (www.kahaar.in) और कहार पोर्टल (www.kahaar.org) सामान्य रूप से विज्ञान और विशेष रूप से टिकाऊ कृषि और पर्यावरण की अवधारणाओं और प्रथाओं का संचार करने के लिए अन्य संगठनों के सहयोग से 2014 से प्रकाशित किए जा रहे हैं। कोलाज और स्कूली छात्रों और ग्रामीण युवाओं के लिए।

कहार

जन विज्ञान की बहुभाषाई पत्रिका

त्रैमासिक 10 (3) जुलाई - सितम्बर, 2023

प्रधान संपादक
प्रोफेसर राणा प्रताप सिंह, लखनऊ

सम्पादक
प्रो. गोविन्द जी पाण्डेय
डॉ. संजय द्विवेदी

कार्यकारी सम्पादक
श्री कृष्णानन्द सिंह, लखनऊ

सह-सम्पादक
डॉ. नागेन्द्र कुमार सिंह, वाराणसी
डॉ. सीमा मिश्रा, गोरखपुर
श्री आकाश मौर्या, बाराबंकी
डॉ. पीयूष गोयल, नई दिल्ली
डॉ. रूद्र प्रताप सिंह, मऊ
डॉ. धीरेन्द्र पाण्डेय, लखनऊ

सम्पादक मण्डल
डॉ. राम सनेही द्विवेदी
डॉ. वेदप्रकाश पाण्डेय, बालापार, गोरखपुर
डॉ. रामचेत चौधरी, गोरखपुर
डॉ. मधु भारद्वाज, लखनऊ।
प्रोफेसर राकेश सिंह सेंगर, मेरठ
डॉ. सुमन कुमार सिन्हा, गोरखपुर
डॉ. विष्णु प्रताप सिंह, लखनऊ
प्रोफेसर रामचन्द्र, लखनऊ
डॉ. अनुज कुमार सक्सेना, सीतापुर
डॉ. अर्चना (सेंगर) सिंह, कनिटकट (यूएस.ए.)

सलाहकार मण्डल
प्रोफेसर सरोज कान्त बारिक, लखनऊ
प्रोफेसर प्रफुल्ल वी. साने, जलगाँव
प्रोफेसर रामदेव शुक्ल, गोरखपुर
प्रोफेसर शशि भूषण अग्रवाल, वाराणसी
डॉ. एस.सी. शर्मा, लखनऊ
प्रोफेसर सूर्यकान्त, लखनऊ
प्रो. अरूण पाण्डेय, भोपाल
डॉ. रूद्रदेव त्रिपाठी, लखनऊ
प्रोफेसर रणवीर दहिया, रोहतक
प्रोफेसर एन. रघुराम, दिल्ली
डॉ. सुधा वशिष्ठ, लखनऊ
श्री आकाश वर्मा, लखनऊ
इ. रविन्द्र कुमार श्रीवास्तव, लखनऊ
डॉ. मनोज कुमार पटैरिया, नई दिल्ली
डॉ. सिराज वजीह, गोरखपुर
प्रो. उपेन्द्र नाथ द्विवेदी, लखनऊ
प्रोफेसर मालविका श्रीवास्तव, गोरखपुर
डॉ. निहारिका शंकर, नोएडा
श्री संजय सिंह, झांसी
श्री उपेन्द्र प्रताप राव, दुदही
इं. तरूण सेंगर, इरविन अमेरिका
डॉ. पूनम सेंगर, चण्डीगढ़
श्री अविनाश जैसवाल, दुदही

आवरण फोटो
श्री प्रकाशवीर सिंह, लखनऊ
प्रबन्ध-सम्पादक
श्री अंचल जैन, लखनऊ
सोशल मीडिया
श्री रंजीत शर्मा, लखनऊ
श्री योगेन्द्र प्रताप सिंह, लखनऊ

संपादकीय पता
04, पहली मंजिल, एल्डिको एक्सप्रेस प्लाजा, शहीद पथ उतरेठिया, रायबरेली रोड, लखनऊ–226 025 भारत
ई–मेल : phssoffice@gmail.com/dr.ranapratap59@gmail.com
वेबसाइट : www.kahaar.in/www.kahaar.org (web portal)
https://www.facebook/kahaarmagazine.com

Technical Articles are Peer Reviwed

सहयोग राशि	प्रिंटकापी	ऑनलाइन
एक प्रति	: 50 रूपये	25 रूपये
वार्षिक	: 180 रूपये	80 रूपये

सहयोग राशि 'प्रोफेसर एच.एस. श्रीवास्तव फाउण्डेशन फॉर साइंस एण्ड सोसायटीः लखनऊ' के नाम भेजें।
खाता संख्या– 2900101002506, कैनरा बैंक, बी.बी.ए. विश्वविद्यालय, लखनऊ
IFSC Code - CNRB-0002900

घोषणा

लेखकों के विचार से 'कहार' की टीम का सहमत होना जरूरी नहीं। किसी रचना में उल्लेखित तथ्यात्मक भूल के लिए 'कहार' की टीम जिम्मेदार नहीं होगी।

लेखकों के लिए

वैचारिक रचनाओं में आवश्यक संदर्भ भी दें एवं इन संदर्भों का विस्तार रचना के अन्त में प्रस्तुत करें। अंग्रेजी रचनाओं का हिन्दी तथा हिन्दी सहित अन्य भाषाओं की रचनाओं का अंग्रेजी या हिन्दी में सारांश दें। मौलिक रचनाओं के साथ रचना के स्वलिखित, मौलिक एवं अप्रकाशित होने का प्रमाणपत्र दें। लेखक पासपोर्ट साइज फोटो भी भेंजे। रचनाऐं English के Times New Roman (12 Point) और हिन्दी के लिए कृति देव 10 में Word Format (Window 2003) में टाइप करें। तस्वीरें, चित्र, रेखाचित्र आदि PDF Format में भेंजे।

विज्ञापन दाताओं के लिए

विज्ञापन की विषय वस्तु के साथ ही भुगतान 'प्रोफेसर एच.एस. श्रीवास्तव फाउण्डेशन फॉर साइंस एण्ड सोसायटी, लखनऊ' के नाम मल्टीसिटी चेक या बैंक ड्राफ्ट द्वारा सम्पादकीय पते पर भेजें। ऑनलाइन पेमेंट उपरोक्त* बैंक खाते में कर सकते है।

रूपये 6000/– पूरा पृष्ठ (सादा) रूपये 4000/– आधा पृष्ठ (सादा)
रूपये 10000/– पूरा पृष्ठ (रंगीन) रूपये 6000/– आधा पृष्ठ (रंगीन)

For Advertisers

Please send payment in form of DD or multicity cheques in favour of 'Professor H.S. Srivastava Foundation for Science and Society' Payable at Lucknow along with subscription forms or Advertisement draft. Online Payment can also be made in the account marked above as*.

Rs. 6000/- Full Page (B/W) Rs. 4000/- Half Page (B/W)
Rs. 10000/- Full Page (Color) Rs. 6000/- Half Page (Color

कहार एक पारम्परिक मनुष्य वाहक के लिए प्राचीन देशज सम्बोधन है। कहार की तरह ही यह पत्रिका जानकारियों एवं लोगों के बीच सेतु बनने की कोशिश कर रही है।

अनुक्रमणिका

क्र०सं०	विषय		पृष्ठ संख्या
01	सम्पादकीय	प्रोफेसर राणा प्रताप सिंह	01
02	Editorial	Prof. Rana Pratap Singh	03
03	बराबरी के जल बँटवारे से आयेगा जल स्वराज्य	जलपुरूष राजेन्द्र सिंह	05
04	सूखते पोखर, तालाब एवं झीलेः भारत में गहराते जल संकट का आहट	डॉ0 सुरभि अवस्थी, डॉ0 रेशू चौहान एवं डॉ0 संजय द्विवेदी	11
05	जल, जीवन, जलवायु और जरूरतों के बदलते स्वरूप	प्रोफेसर राणा प्रताप	16
06	माइक्रोप्लास्टिक प्रदूषणः समस्या, परिणम और निवारक उपाय	प्रोफेसर नन्ल लाला	19
07	बुंदेलखंडः संकट ग्रसित क्षेत्र	आकाश मौर्य	22
08	हरियाणवी गीत–किसान	मंगतराम शास्त्री	23
09	मोटे अनाजों (Mullets) की खेती का भारत में भविष्य	डॉ0 आशीष कुमार अवस्थी एवं डॉ0 मधु प्रकाश क्षीवास्तव	24
10	ढाई अक्षर की क्षमता	अज्ञात, संशोधन – प्रोफेसर राणा प्रताप सिंह	26
11	धान की अच्छी उपज के लिए खर–पतवार प्रबंधन	डॉ0 शिव मंगल प्रसाद एवं पंकज कुमार सिंह	27
12	Revolutionizing Agriculture: Water Shortage Solutions for New Fields and Practices	Pawan Kumar	31
13	Lab Grown Meat: A Low Carbon and Water Footprint Alternative	Akshita Singh, Shruti Rajkishore Kuril, Pushpa Reddy, Nikku Yadav, Raj Kumar Khalko and Dr. Sunil Babu G	41
14	Artificial Intelligence's Impact on Agriculture and Education: A Transformative journey	Prof. R.S. Sengar[1] and Kartikey Sengar[2]	47
15	Smartphone: A Reason of Many Health Problems	Dr. Diksha Gautam	51
16	Innovation Journey 2023		54

सम्पादकीय

बड़ा झगड़ा

हमारे बाहर और हमारे भीतर, हर समय कई तरह के विमर्श और प्रतिवाद चलते रहते हैं। इसलिए अपने भीतरी और बाहरी विकास को जारी रखने के लिए तथा भीतर और बाहर सब तरह शांति, आनंद और धारणीयता हासिल कर पाने ने के लिए हम अपने विवादों के समाधान निकालने की कोशिश करते रहते हैं। 'धारणीयता' और विशेष रूप से पर्यावरण धारणीयता आज एक चर्चित शब्द है, और विश्व भर मे इसे सफलता पूर्वक लागू कर पाने के प्रयास चल रहें हैं। अब जब हम सतत् विकास और धारणीयता के अर्थ को समझने का प्रयास करते हैं, तो आर्थिक, सामाजिक और पारिस्थितिक सिद्धांतों के बीच एक स्पष्ट सी टकराहट दिखने लगती है, जिस पर विश्व के नवीन विकासात्मक दर्शन में अभी भी गंभीर विचार विमर्श होना शेष हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ ने सामाजिक, क्षेत्रीय, राष्ट्रीय और वैश्विक स्तर पर अर्थव्यवस्था और पारिस्थितिकी के साथ-साथ अर्थव्यवस्था और समाजशास्त्र के बीच सम्भावित संघर्षों से निपटने के लिए भविष्य की विकास रणनीतियों के लिए सत्रह सतत् विकास लक्ष्य निर्धारित किए हैं। परंतु इन्हे अब भी सफलता पूर्वक विश्व भर में प्रभावी तरीके से लागू कर पाना एक बड़ी चुनौती है। जिस तेजी से जलवायु परिवर्तन,वैश्विक ऊष्मिकरण और बढ़ती आपदाओं के कारण पर्यावरणीय धारणीयता का संकट बढ़ रहा है, उस तेजी इनके समाधान की तरफ हम नहीं बढ़ पा रहे हैं। हमें औद्योगिक विकास जनित गंभीर पर्यावरणीय समस्याओं के उपचार के साथ-साथ इनका प्रबन्धन करने के प्रयासों मे और गंभीरता तथा निरन्तरता लानी होगी।

अधिक से अधिक धन कमाने, अधिक से अधिक सुख-सुविधाएँ खरीदने और इन उपलब्धियों के लिए अपने मन में अहंकार पालने की प्रवृत्तियाँ हमारे भीतर लगातार बढ़ती जा रही हैं। वर्तमान आर्थिक विकास का मार्ग, प्रकृति से जुड़े बहुमूल्य प्राकृतिक संसाधनों को बड़े पैमाने पर संश्लेषित सामग्रियों में रूपांतरित करके उद्योग और बाजार रूप मे द्वारा अधिक से अधिक लोगों तक बेंच देने से होकर गुजरता है। विश्वभर के आर्थिक रूप से सक्षम लोग अपने जीवन में और अधिक आराम तथा अपने कार्यों मे और अधिक आसानी अर्जित करने के लिए खरीद-खरीद कर इन औद्योगिक उत्पादों को इकट्ठा करते रहते हैं, और उनका खुलकर उपयोग करते हैं। पिछली शताब्दी के आखिरी दशकों में औद्योगिक ढांचों की बहुलता के साथ-साथ एक व्यापक तथा शक्तिशाली मुक्त बाज़ार, भी पूरी मजबूती से खड़ा हो गया, जो इन संश्लेषित उत्पादों को उत्पादकों से उपभोक्ताओं तक ले जाने की प्रक्रिया में अधिक से अधिक धन अर्जित करना चाहता है। वह इन सामानों की अधिक से अधिक कृत्रिम मांग पैदा करता हैं, तथा इसके लिए सभी प्रसार माध्यमों से लुभावने विज्ञापन प्रसारित होते रहते। इन औद्योगिक और उपभोग प्रक्रियाओं में अपशिष्ट उत्पन्न होता है, जिसे उद्योग से लेकर उपभोक्ता तक सब अपने आस-पास के जल स्रोतों, वायु और मिट्टी में फेंक देते हैं। इसके साथ-साथ इन औद्योगिक तथा विपणन प्रणालियों मे भारी मात्रा मे वातावरण को गरम करने वाली गैसे पैदा होती हैं जो ग्रीन हाउस गैसों के वलय को और अधिक सघन करके वैश्विक ऊष्मिकरण तथा जलवायु परिवर्तन का कारण बन रही है।

इन ठोस, द्रवित तथा गैसीय अपशिष्टों का प्रमुख घटक वे गैर-प्राकृतिक संश्लेषित पदार्थ ही होते हैं, जो अप्राकृतिक होने के कारण मानव सहित सभी प्रकार के जीवों के लिए विषाक्त और खतरनाक हैं। पानी की गुणवत्ता वैसे भी खराब होती जा रही है, और इसकी उपलब्धि लगातार कम हो रही है। पानी की पवित्रता कायम न रह पाने तथा इसके इष्टतम रूप और इष्टतम मात्रा में उपलब्ध न हो पाने से समाजों, समुदायों, क्षेत्रों, राष्ट्रों और पारिस्थितिक तंत्र के गैर-मानवीय प्राकृतिक घटकों के बीच लगातार संकट और संघर्ष बढ़ता जा रहा है।

आर्थिक और पर्यावरणीय दर्शन के टकराव के कारण दिन-प्रतिदिन जलवायु परिवर्तन और अधिक विनाशकारी होता जा रहा है, जो अब वैश्विक जलवायु परिवर्तन और वैश्विक ऊष्मिकरण के रूप में वैश्विक संगठनों, सभी प्रभावित देशों और विश्व भर के लोगों को परेशान कर रहा है। 'ग्रीनहाउस गैसों' के उच्च उत्सर्जन के कई मौजूदा कारण हैं, जिनमें लगातार बढ़ते जा रहे इस औद्योगिक जाल का अनियंत्रित उत्सर्जन और बाजार केंद्रित आर्थिक दौड़ के रूप में संश्लेषित पदार्थों की मानव जनित बढ़ती खपत और इनका अपशिष्ट के रूप मे पर्यावरण मे शामील होना सबसे प्रमुख हैं। पिछली

04, पहली मंजिल, एल्डिको एक्सप्रेस प्लाजा, शहीद पथ उतरेठिया, रायबरेली रोड, लखनऊ–226 025
ई–मेलः dr.ranapratap59@gmail.com

शताब्दी के अनियंत्रित विकास की प्रक्रिया मे हम उन प्राकृतिक घटनाओं को भी तेज़ कर रहे हैं, जो जलवायु परिवर्तन और वैश्विक ऊष्मिकरण मे लगातार वृद्धि करते जा रहे हैं। उदाहरण स्वरूप हाल ही में, यह देखा गया है कि एल-नीनो, जो कई कालखंडों मे समुद्र में गरम लहरें पैदा कर गरम वायु के प्रवाह को संचालित करने लगता और कई क्षेत्रों मे सूखा लाने का कारण बन जाता है, वह समुद्र के पानी के लगातार गर्म होने से और अधिक बढ़ रहा है। हम जानते हैं, कि वैश्विक ऊष्मिकरण के कारण समुद्र का पानी लगातार अधिक गर्म हो रहा है। इसी प्रकार, मिट्टी के अधिक गर्म होने के कारण मिट्टी से बंधा कार्बन अधिक विघटित होने लगता और क्षोभमंडल में अधिक मुक्त कार्बन उत्सर्जित करने लगता। दूसरी तरफ देखे तो सतह पर, सतह के नीचे और सतह के ऊपर, गर्मी के बढ़ने के अनुपात में पानी की जरूरतें और जल स्रोतों से पानी का वाष्पीकरण, भी लगातार बढ़ रहे हैं।

हम अधिक धन, अधिक आराम और अधिक आक्रामकता की तलाश मे प्राकृतिक सद्भाव और पारिस्थितिकीय सम्बन्धों के विनाश के दुष्चक्र में प्रवेश कर चुके हैं। लोगों, कंपनियों, उद्योगों, समाजों, राष्ट्रों और राष्ट्र-समूहों में असमानता भी संघर्ष का कारण बनती है, तथा शांति और धारणीय समृद्धि के लिए खतरा पैदा करती है। विकास की धारणीयता का चौथा सबसे महत्वपूर्ण घटक व्यक्तिगत, सामाजिक और क्षेत्रीय संस्कृतियो की भागीदारी की अवधारणा अभी हमारे धारणीय विकास के विमर्श से बाहर है। हर समाज, क्षेत्र, राष्ट्र की अलग-अलग विशिष्ट संस्कृति होती है, और अंततः सबके ऊपर एक वैश्विक संस्कृति भी विकसित होती रहती। आज की वैश्विक संस्कृति दुर्भाग्यवश अधिक धन, अधिक आराम और अधिक आक्रामकता के साथ जीवन जीने की अवधारणा को ही विकास मानने लगी है, जिस पर नये सिरे से विमर्श और विचार करने की जरूरत है। हमें समझना होगा की सांस्कृतिक बदलाव अपने ही तरह के विशिष्ट हस्तक्षेप की मांग करते है और वे अपना समय लेते है।

पारंपरिक धारणीयता के मॉडल को अर्थव्यवस्था, समाजशास्त्र और पारिस्थितिकी के त्रिभुज के साथ संस्कृति को चौथे स्तंभ के रूप मे जोड़कर फिर से नये सिरे से डिजाइन करने की आवश्यकता है। इस तरह देखे, तो विकास की धारणीयता को नये सिरे से व्याख्यायित करने की तत्काल जरूरत है, तथा सतत् विकास लक्ष्यों की कार्य योजनाओं में सांस्कृतिक चेतना को एक मुख्य घटक के रूप मे समावेशित किए जाने का काम अभी बाकी है। मेरा मानना है कि वैश्विक सम्मेलनो में चर्चित मात्र आर्थिक, सामाजिक और पर्यावरणीय सम्बन्धों की अवधारणा पर बनाई गई धारणीयता के त्रिभुज के आधार पर समकालीन विकास की अवधारणा से धारणीयता हासिल नहीं की जा सकेगी और आज नहीं तो कल इसमे लोगों की सांस्कृतिक चेतना को जोड़कर इसकी एक चतुर्भुजीय अवधारणा बनानी होगी। किसी भी परिवेश में धारणीयता तब तक हासिल नहीं की जा सकती, जब तक यह लोगों के मस्तिष्क और चेतना में शामिल न हो। हम भारतीय परिप्रेक्ष्य में भारत सरकार द्वारा हाल ही में शुरू किए गए 'लाइफ' मिशन के साथ तेजी से औद्योगिक विकास के वैश्विक रास्ते को अपना रहे हैं। यह प्रयास तेज आर्थिक समृद्धि अर्जित करने के लिए तो आवश्यक हो सकता है, परंतु 'लाइफ' की अवधारणा जिसमे हमारे जीवन में सभी संसाधनों के इष्टतम उपयोग पर जोर दिया जाता है तेज और व्यापक औद्योगिकरण के साथ-साथ के अनुकूल नहीं है। धारणीयता को शामिल करने के लिए एक नये तरह के तकनीकी, आर्थिक और सांस्कृतिक दर्शन की आवश्यकता हैं ।

हम प्रकृति की पूजा करने और उसके साथ सच्चे सद्भाव और सम्मान के साथ रहने की लंबी भारतीय परंपराओं के बारे में बात तो कर रहे हैं, लेकिन तीव्र आर्थिक विकास और पारिस्थितिकीय धारणीयता के परस्पर विरोधी दर्शन के बीच के विरोधाभास जब तक जमीन पर हल नहीं किए जा सकेंगे, तब तक बात नहीं बनेगी । इसके लिए हमारे प्रयास आज अधिक संयोजित पारदर्शी और अधिक वैज्ञानिक दृष्टिकोण से लैस होने चाहिए। संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा परिभाषित सत्रह सतत् विकास लक्ष्यों के माध्यम से धारणीय विकास प्राप्त करने के प्रयासों मे सांस्कृतिक और सामाजिक तथा प्रकृति संगत दर्शन को गहराई से समझकर हर लक्ष्य की कार्य प्राणली में शामील करना होगा और उसे योजनाओं के साथ लोगों की चेतना मे जगाना होगा। यह काम अभी शेष है। इन लक्ष्यों की सफलता के लिए हमारी अवचेतना में एक दार्शनिक, वैचारिक और कार्यकारी परिवर्तन लाये जाने की तत्काल आवश्यकता है। वैज्ञानिक दर्शन और वैज्ञानिक तरीकों को अपनाने के साथ-साथ जमीनी स्तर पर इसके कार्यान्वयन के लिए हमें वैचारिक, संरचनात्मक और पद्धतिगत योजनाएँ बनानी शुरू करना चाहिए, जिसमें सर्वांगीण विकास से जुड़े मुद्दों, सफलताओं-असफलताओं के कारणों तथा कारकों को समझकर इनमें कई कोणों से समय-समय पर सत्यापन एवं विश्लेषण कर वांछित नवीन बदलाव किए जा सकें ।

राणा प्रताप

(राणा प्रताप सिंह)
www.ranapratap.in

Editorial

The Big Conflict

There are significant conflicts around us, within us and so to keep the, things going on, the resolutions are drawn, time and again, against those conflicts to achieve peace and happiness. The sustainability is a 'buzz' word today. When we try to understand meaning of the sustainable development; a triangle of economic, social, and ecological concerns comes to our mind. The United Nations Organization (UNO) has announced seventeen Sustainable Development Goals (SDGs) for the future developmental strategies to deal with the conflicts between the economy and ecology as well as economy and sociology at societal, regional, national, and global levels. However, problems are not getting adequate remedies. We are unable to adopt to the climate change related crises as our technological and cultural changes are not in accordance with the pace of the problems.

The flow, its purity and sacredness of, one of the most essential natural resource, water have been hampered in the contemporary human civilizations, focused to earn more money to buy more comforts, more power, and more arrogance. The path of this economic growth goes through an industrial conversion of nature bound natural resources in to the synthetic materials, which can be used as readymade products by most of the human population, to earn more comforts and ease. The market which manages to earn more margins in carrying the products from the producers to the consumers motivates people for more and more consumption through series of attractive advertisements. In these production to consumption processes, throughout, the waste is generated and thrown out in water bodies, air, and soil abruptly. Similarly, the more emission of greenhouse gases increases in the rapidly growing economies. A major component of this solid or liquid waste is xenobiotic compounds, which are harmful being non-natural, highly toxic, and dangerous to all living organisms including human beings. The major components of gaseous emissions are Carbon dioxide, Methane, Nitrogen oxides and volatile organic compounds that increase the greenhouse effects, a major cause of the global warming.

The water is getting less in quantity, quality, and its purity. Its sacredness and lack of availability in its optimal form and optimal amount are decreasing day-by-day, which causes crisis and conflicts between the societies, communities, regions, nations, and the man with non-man life forms in the ecosystems.

The conflicts of economic and ecological philosophies, if not resolved, will lead to a more devastating climate change, which is now globally bothering the nations and the people as disrupt changes in weather and increase disasters and Global Warming. There are plenty of ongoing reasons for high emissions of greenhouse gases, in which man caused anthropogenic reasons in form of the industrial and market governed economic race is one of the key drivers. It also accelerates the natural processes of GHG emission which add the rate of increase in this Climate Change and Global Warming. Recently, it has been observed that EL-Nino, which brings drought to many regions, when creates heat waves and warm air circulation from the sea, are increasing more as the oceanic water is also getting warmer due to the global warming. Similarly, soil bound carbon is getting more decomposed and emitting more free carbon in troposphere due to more warming of soil. The water needs and water losses including its evaporation from the water bodies, are increasing in proportion to warming on the surface, below the surface and

above the surface.

We have entered in a vicious cycle of destruction of natural harmony and ecological integration through accumulation of more money, more comfort and more aggression. The un-equality in the people, companies, industries, societies, nations, and the group of nations also cause conflicts and danger to the sustainable peace and long-lasting prosperity. The fourth most important component of the sustainability is culture of the human in person, human societies, geographical regions, and the nations. A global culture, which dominates all others also emerges in influence of the developmental philosophies and life style of the rich people, rich societies, and rich nations. At present in influence of the mighty market managements, industrial economy and a fluent life style pursuing flow of more money, more comfort, and more aggression has emerged as a global dominating culture. It has pre-mandated with more consumption, more waste generations, and more emission. It is against the principles of sustainability and natural harmony.

The conventional sustainability model needs to be redesigned with fourth pillar including Culture with Economy, Sociology and Ecology as its key drivers. The conventional concept of triangle made with the other three requires to be redrawn as a sustainability quadrate in place of sustainability triangle. The sustainability cannot be achieved in the ecosystem and in the human societies, unless it will be in mind of the people. We are adopting the global pathways of rapid industrial development with a 'LIFE mission' floated recently by the Indian Government, which emphasizes a shift towards optimal use of resources in our life to earn the economic and ecological sustainability together. These two looks contradictory in its conventional echoes and hence assimilation of both in one modal is a major challenge for the planners and executers of the governance today.

We are also talking about the long Indian traditions of worshiping the nature and living with it in true harmony and respect. But the conflicting philophies of rapid economic growth through industrial conversion of natural resources and ecological sustainability are not getting resolved on the ground indeed, due to the challenges to adopt the developmental infrastructures and mindsets suitable for the green circular economy. A cultural philosophy of optimal resource consumption and zero waste discharges needs a big cultural and social transformations as the front to achieve the Sustainable Development through the seventeen SDGs defined by the UNO. A philosophical and conceptual change in our mindset is the pre-requisite, and we now should start making conceptual, structural, and methodological plans on its implementation on the ground zero with adopting scientific philosophies and scientific methods, which includes periodical verification and analysis of the inputs and outputs from the multiple angles. Its critical analysis and innovation will help to evolve gainful mechanism for future Sustainable Development keeping the concern of sustainability quadrate in true sense.

Rana Pratap

(Rana Pratap Singh)
www.ranapratap.in

जल विमर्श-।

Peer Reviewed

बराबरी के जल बँटवारे से आयेगा जल स्वराज्य!

❑ जलपुरुष डॉ0 राजेन्द सिंह

सूरज को आदित्य स्वराज कहते हैं। वह अपनी आज़ादी से नियमित उदय व अस्त होता है। लेकिन वह सभी के प्राणों को सतत् पोषित करने वाली ऊर्जा से धरती, प्रकृति, मानवता और सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को जल की निर्मिती करके पोषित करता रहता है। इसी प्रकार का पोषण हमारे जल स्वराज में भी निहित है।

महाराष्ट्र में शिवाजी और राजस्थान में महाराणा प्रताप को स्वराज्य का संस्थापक माना जाता है। इन दोनों को स्वराज्य निर्माता भी माना जाता है। इन्होंने किसी से अपने राज्याधिकार की माँग नहीं की थी, बल्कि अपने कर्तव्य पालन हेतु सत्याग्रह और संघर्ष किया था। संघर्ष में विजय और पराजय इनका मुख्य लक्ष्य नहीं था, बल्कि उन्होंने अपना कर्तव्य समझकर उसकी पालना करना ही स्वराज्य का मुख्य लक्ष्य बनाया था।

श्री लोकमान्य तिलक जी ने ''स्वराज हमारा जन्मसिद्ध अधिकार'' की बात सूर्य से प्रेरित होकर ही कही थी। आज उनका यह कथन पूरे भारत में मान्यता प्राप्त कर चुका है।लोकमान्य तिलक ने भी विजय और पराजय की चिन्ता किये बिना अपना कर्तव्य पालन करते हुए ही कहा था कि, ''स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है।'' इस दिशा में भारत के बहुत से महान् लोगों ने बहुत बड़े–बड़े प्रयास किए थे।

महात्मा गांधी के स्वराज की सिद्धि भी सूर्य के सत्य और प्रकृति की अहिंसा से जुड़ी है। प्रकृति किसी से अपना अधिकार कभी नहीं माँगती, वह तो अपने कर्तव्य को स्मरण रखते हुए काम करती है, जिससे हमें अधिकार माँगने की ज़रूरत ही नहीं रहे। हमें अपने कर्तव्य का अहसास करने का सम्पूर्ण आभास सातत्यपूर्ण तरीके से बना रहे, तभी हम 'स्वराज' कायम रख सकते हैं। बापू आज जीवित होते तो जल के निजीकरण व बाज़ारीकरण के विरूद्ध सत्याग्रह आरम्भ करते। सभी को सम्मानपूर्वक बराबरी से जल मिले, इस हेतु जल संरचनाओं का विकेन्द्रित निर्माण करके सभी को समान मालिकी भी प्रदान कराते।महात्मा गांधी सफल हुए, क्योंकि उन्होंने स्वराज्य को पाने हेतु तीव्रता नहीं दिखाई, बल्कि त्वरा से परिपूर्ण होकर भारत की जनता को स्वराज्य के कर्तव्य पालन कराने हेतु तैयारी करवाई थी। उन्होंने स्वयं प्रत्यक्ष रचनात्मक कार्य एवं अहिंसक सत्याग्रह किया था।

जनवरी 1921 में मोहनदास करमचन्द गांधी अपनी पुस्तक ''हिन्द स्वराज्य'' के विषय में लिखते हैं – ''स्वराज्य की जो तस्वीर मैंने खड़ी की है, वैसा स्वराज्य कायम करने के लिए आज मेरी कोशिश चल रही है। मैं जानता हूँ कि अभी हिन्दुस्तान उसके लिए तैयार नहीं है। ऐसा कहने में शायद ढिठाई का भास हो, लेकिन मुझे तो पक्का विश्वास है कि, इसमें जिस स्वराज्य की तस्वीर मैंने खींची है, वैसा स्वराज्य पाने की मेरी निजी कोशिश ज़रूर चल रही है। लेकिन इसमें कोई शक नहीं है कि, आज मेरी सामूहिक प्रवृत्ति का ध्येय तो हिन्दुस्तान की प्रजा की इच्छा के मुताबिक ''पार्लियामेन्टरी ढंग का स्वराज्य पाना है।'' रेलों या अस्पतालों का नाश करने का ध्येय मेरे मन में नहीं है। अगर उनका कुदरती नाश हो तो मैं ज़रूर उसका स्वागत करूँगा। रेल या अस्पताल दोनों में से एक भी ऊँची और बिल्कुल शुद्ध संस्कृति की सूचक (चिह्न)नहीं है। ज़्यादा से ज़्यादा इतना ही कह सकते हैं कि, वह ऐसी बुराई है, जो टाली नहीं जा सकती। दोनों में से एक भी हमारे राष्ट्र की नैतिक ऊँचाई में एक इंच की भी बढ़ोत्तरी नहीं करती। उसी तरह मैं अदालतों के स्थायी नाश का ध्येय भी मन में नहीं रखता, हालाँकि ऐसा नतीजा आये तो मुझे अवश्य बहुत अच्छा लगेगा। यन्त्रों और मिलों के नाश के लिए तो मैं उससे भी कम कोशिश करता हूँ। उसके लिए लोगों की आज जो तैयारी है, उससे कहीं ज़्यादा सादगी और त्याग सत्य साधना की ज़रूरत रहती है।''

इस काल में बापू (महात्मा गांधी) के खिलाफ़ बहुत दुष्प्रचार किया गया था। यह स्वराज्य की उथल–पुथल का दौर था। तभी बापू ने कहा स्वराज्य सत्य है। इसे पाने का मेरा आग्रह सत्याग्रह है– ''सत्याग्रह कोई कच्ची खोखली चीज नहीं है। उसमें कुछ भी दुराव–छिपाव नहीं है। उसमें कुछ भी गुप्तता नहीं है। 'हिन्द स्वराज्य में बताये हुए सम्पूर्ण जीवन–सिद्धान्तों के एक भाग को आचरण में लाने की कोशिश हो रही है, इसमें कोई शक नहीं। ऐसा नहीं है कि, उस समूचे सिद्धान्त का अमल करने में जोख़िम है : लेकिन आज देश के सामने जो प्रश्न है, उनके साथ जिन हिस्सों का कोई सम्बन्ध नहीं है, ऐसे उल्लेखों को देकर लोगों को भड़काने में न्याय हरगिज़ नहीं है।''

किसी को भी कष्ट दिये बिना, अपने सत्य के आग्रह को सदैव भय–मुक्त होकर निश्चिन्तता से अपने आग्रह पर टिक कर रहने वाला ही स्वराज्य की कल्पना को स्वीकार करता है। वही स्वराज्य की कल्यना को साकार करने में सक्षम होगा। आज आज़ादी और लोकतन्त्र के 75 वर्षों के बाद भी भारत में सभी को समान रूप से बराबर से जीवन, जीविका और ज़मीर हेतु जल उपलब्ध नहीं है। कुछ लोग जल अधिक क़ब्ज़ा करके, जल बर्बाद कर रहे हैं, जबकि बहुत लोगों को पीने के लिए भी पानी उपलब्ध नहीं है। इनकी धरती और धरती के पेट का पानी भी शोषित

तरून भारत संघ, अलवर (राजस्थान) – 301022
ई–मेलः jalpurushtbs@gmail.com

कर लिया है और किया जा रहा है।

जो इस जल सृष्टि–रचना को समझेगा, वह सत्यस्वरूप होगा। जो इस पर सोचेगा, उसके ध्यान में आयेगा कि, यह जल ऊपर–ऊपर और कितना है। सोचते–सोचते पीछे चले जायें–इस भूमि को उसका आधार, उसको उसका आधार, ऐसा करते–करते पीछे–पीछे चले जाते हैं तो परमेश्वर के पास पहुँच जाते हैं। जल ही परमेश्वर है। यह ज़रूर मिलेगा, परन्तु इसे पाने हेतु प्रयास और प्राप्त करके अनुशाषित उपयोग करना सीखें।

हम सभी का निर्माण महाविस्फोट से हुआ है। 13.8 अरब साल पहले महाविस्फोट से ही वस्तुमान, समय और अंतरिक्ष का प्राकट्य हुआ था। इसके पहले क्या था? इसे कोई नहीं जानता। धरती पर हुए विस्फोटों के इतिहास से हम सीख सकते हैं। प्राकृतिक सृजन के लिए महाविस्फोट होते ही हैं। जब तक भौतिक शास्त्र के सिद्धान्त नहीं थे।

दूसरा महाविस्फोट 3.8 अरब वर्ष बाद हुआ; जब कुछ भौतिक शास्त्र के सिद्धान्त बनने लगे थे। तब वस्तुमान और ऊर्जा के परस्पर सम्बन्धों से अणु निर्माण हुआ। अणु और परमाणु के सह–सम्बन्धों को समझना ही रसायन शास्त्र है। इसी से जीवन और मृत्यु की औषधि निर्माण होती है। इसी से आयुर्वेद का आरम्भ मान सकते हैं।

जब भी व्यक्ति को आसुरी तत्त्व मिल जाता है, तो वह विनाश के पथ पर चलता है। और शुभ की चाह रखने वाले व्यक्ति को जब ज्ञान होता है, तो उसके मन में जनचेतना द्वारा सभी के लिए सुख, नीरोग, शान्ति, समृद्धि की राह खोजना आरम्भ होता है तथा सेवा का भाव जाग्रत होता है। सभी की भलाई हेतु भय–मुक्त बनाने के लिए आरोग्य रक्षण एवं चिकित्सा के उपाय खोजता है। अपने आनन्द को वह साझा करता है, सभी की भलाई में अपनी भलाई ढूँढ़ता है। भलाई करने के सभी रास्ते खोजता है, ऐसे लोगों के जीवन में प्राकृतिक सत्य की सत्यता को ''भगवान्'' परम् माता–पिता–परमात्मा मानकर, उसी का प्रेम, सम्मान, श्रद्धा, निष्ठा और भक्ति करने लग जाता है।

पृथ्वी तो 4.5 अरब साल पहले ही अस्तित्व में आ गई थी। जब तक पृथ्वी जलते वायु का गोला थी, तब तक इस पर कोई कोरोना जैसा वायरस या जीव भी नहीं था। पृथ्वी पर बहुत बड़ा विस्फोट होने से हाइड्रोजन के दो और ऑक्सीजन का एक परमाणु के मिलने से पृथ्वी पर जल की निर्मिती हो गई। उस काल में पृथ्वी काफी गर्म थी, इसलिए जीव सम्भव नहीं था। उसके बाद जल ने धरती को ठण्डा किया। तीसरा महाविस्फोट था 3 अरब साल पहले, जब ''पृथ्वी'' पर कुछ अणु जुड़ गए, वह जीव कहलाने लगे। जल में एक शैल के अमीबा जैसे जीव ने जन्म लिया, फिर पानी की भाप बन कर उससे बादल बने और वर्षा का सिलसिला लाखों साल तक चलता रहा।

3.4 अरब साल पहले समुद्र का जल काफ़ी गर्म था, जिसमें असंख्य अणु–परमाणु बिखरे पड़े थे। यह प्रायमॉरडीयल हॉट सूप कहा जाता था। इसके ऊपर बिजलियाँ कड़कती थीं। इस असाधारण वातावरण में साधारण अणु–परमाणु ने ज्यादा जटिल संख्या का निर्माण किया। यह जीवन की शुरुआत थी। जीवन अपने जैसे गुणधर्म के अन्य जीवों को जोड़कर अपनी एक और शृंखला को जन्म देने की क्षमता रखता है। इसलिए जीवन के साथ, जीवन की ज़रूरत पूरी करने हेतु एक समग्र खाद्य शृंखला भी बन गई। यह खाद्य शृंखला एक लम्बे काल तक चली।

महासागरों में जब जीव का जन्म हुआ तो उसी जीव से विविधतापूर्ण खाद्य शृंखला सम्पन्न सृष्टि का सृजन हुआ। चार्ल्स डार्विन ने कहा था कि प्रकृति चुनाव करती है, वह उन्हीं जीवों को चुनती है, जो अपने पर्यावरण के साथ अनुकूलन स्थापित करते हैं। जीव बहुत होते हैं और संसाधन सीमित। सीमित संसाधनों की छाया में अपने को ढालकर जो टिकाये रखता है, प्रकृति उसी का चुनाव करती है, वही बचता है। सदैव ही प्रकृति के अनुकूल जीवों को ढलना पड़ता है, इसी से जैव विविधता का निर्माण होता है। इस प्रक्रिया को हिन्दु शास्त्रों में सनातन कहते हैं। यह सनातन प्रक्रिया हिन्दु शास्त्र के अनुसार कभी नष्ट नहीं होती, परन्तु उसमें भी महा विस्फोटों को प्रलय शब्द के साथ जोड़कर उपयोग किया जाता रहा है।

जलवायु परिवर्तन जोखिम के बारे में 'महाविस्फोट' कहना या 'प्रलय' की घण्टी बजाना, इसको मानें या न मानें, इसे समझना थोड़ा कठिन है। प्रकृति, की प्राकृतिक खाद्य शृंखला में बहुत सारे जीव और जातियों के विलुप्त होने को महा विस्फोट की तरह देखा नहीं गया; जबकि खाद्य शृंखला से किसी भी जीव या जातियों के समूह का विलुप्त होना, महा विस्फोट है।

आज का पृथ्वी पर गैर–बराबरी का जल बँटवारा बहुत ही बड़ी प्रलय का कारण बन सकता है। आज बहुत लोग बेपानी होकर, उजड़ रहे हैं। जब कोई बिन पानी उजड़ कर कहीं दूसरी जगह जाता है, तब दुनिया उन्हें जलवायु परिवर्तन की जोखिम से प्रभावित शरणार्थी कहते हैं। यही कारण है अब दुनिया में लगातार जलवायु शरणार्थियों की संख्या बहुत बढ़ गई है। ये जब भी अपना स्थान जल अधिकता या कमी के कारण छोड़ने को मज़बूर होते हैं और उजड़ कर सभी दूसरे स्थान पर पहुँचते हैं। वहाँ लोग इन्हें हेय दृष्टि से देखते हैं, जिससे तनाव शुरू होता है।

''मरता क्या नहीं करता'' वह खुद मरने से पहले दूसरों को मारता है। बस! यही तीसरे जल विश्व युद्ध के हालात बना रहा है। हम दुनिया को देखते–देखते अपने आपको देखें तो जल का संकट पूरी दुनिया की तरह भारत में भी है। कावेरी विवाद, महानदी विवाद, कृष्णा विवाद आदि सभी नदियों के पुराने व नये विवाद अब तक नहीं सुलझ रहे। दामोदर वैली, जिसमें आज़ादी से पहले काम शुरू हुआ था, उसमें सक्षम ताकतवर राज्य पं. बंगाल ने बहुते सारे बांध बना दिये। बंगाल का भू–क्षेत्र दामोदर बेसिन का केवल 20 प्रतिशत है, लेकिन वह 80 प्रतिशत जल प्राप्त करके, चावल की फसलें ले रहा है। अंग्रेजों की गैर–बराबरी वाली कानून व्यवस्था का समाधान आज तक नहीं हुआ। अंग्रेजों के बने कानून की भी ठीक से पालना नहीं हुई। 'जिसकी लाठी उस की भैंस' वाली कहावत को दामोदर नदी घाटी कानून ने चरितार्थ कर दिया है। इस घाटी का काम बहुत पहले आरम्भ हो गया था, किन्तु इसके जल बँटवारे पर बिहार–बंगाल के मुख्यमंत्रियों ने 1978 में हस्ताक्षर किये थे। इस वैली में कुल 8 बाँध बनने थे। अभी तक कुल चार बने हैं। तीन बाँधों के पूरे जल पर बंगाल का क़ब्ज़ा है। एक बाँध तिलैया पर झारखण्ड का क़ब्ज़ा है। यह राज्य इसके जल का उपयोग नहीं कर पा रहा है, क्योंकि इसने सिंचाईं की नहर ही नहीं बनाई है।

जब इस परियोजना का शुभारम्भ हुआ था, उस वक्त टैनटैन्सी नदी वैली परियोजना की तर्ज़ पर केवल अन्न उत्पादन हेतु बाढ़ के जल को सिंचाई में काम लेना था और विद्युत निर्माण करना था। अब बंगाल में तो इससे सब कैनाल बन गई, लेकिन बिहार–झारखण्ड की ज़मीन पर कैनाल नहीं बनी है। बिहार ने तिलैया–ढांडर परियोजना के अन्तर्गत नहर निर्माण कर ली है। उसे इस नदी घाटी का पानी नहीं मिला है। बिहार ने जल बँटवारे के लिए जल न्याय प्राधिकरण की माँग की थी। जल न्याय प्राधिकरण के दर्जनों निर्णयों को मैं जानता हूँ। इन्हें किसी भी राज्य ने माना ही नहीं और उन निर्णयों को क्रियान्वित भी नहीं किया है। भारत सरकार ऐसे निर्णयों को क्रियान्वित कराने में रुचि नहीं रखती है। इसलिए ये निर्णय लागू नहीं हुए हैं। ऐसे हालातों में भारत में जल विवाद बढ़ते ही जा रहे हैं।

जल विवादों का समाधान संवाद, विचार–विमर्श और उसमें से निकले निष्कर्ष से होना चाहिए। हम जानते हैं, ऐसे विवादों के समाधान की भारत सरकार की ही ज़िम्मेदारी बनती है। क्योंकि, अंतरराज्यीय नदी को प्रवाह प्रदान करने का अन्तिम निर्णय केवल भारत सरकार को है।

राज्यों की जल संरचनाओं एवं जल भण्डारों के निर्णय राज्य सरकार करती है। 73–74वें संविधान संशोधन के बाद पंचायत व नगरपालिकाओं की जल संरचनाओं के निर्णय उन्हें ही करने हैं। इस प्रकार हमारे संविधान ने जल बँटवारा तीन भागों में कर दिया है। परन्तु इस पर हमारी सरकार और समाज दोनों गैर ज़िम्मेदार बने दिखाई देते हैं। भारत में जब जल स्वराज्य होगा, तभी हमारी सरकारें बिना माँगे सभी को समान रूप से जल की पूर्ति कर सकेंगी। आज–कल जल न्याय नही तो जल स्वराज्य कहाँ? जल स्वराज्य हेतु जल न्याय ज़रूरी है। जल पर सभी जीव–जगत् का हक़ एक समान है। इस बात को ध्यान में रखकर, समाज और सरकार काम करे।

जल ही जीवन है, यह सत्य है। जल किसी के साथ हिंसा नहीं करता, उसका मूल चरित्र अहिंसामय होता है। इसलिए जल की भाषा पूर्ण रूप से अहिंसामय होती है और नदियाँ जल की बोली बन जाती हैं। जब तक हम जल को भगवान् मानकर उसको केवल जीवन के लिए, जीवन का आधार मानकर उपयोग करते थे, तब तक जल के साथ हिंसा नहीं थी। लेकिन पश्चिमी सभ्यता ने जल को जीवन न मानकर बाज़ार की वस्तु माना है, इसलिए पाश्चात्य शिक्षा ने इस दुनिया में जल के द्वारा हिंसा शुरू की है। मूलतः जल किसी के साथ हिंसा नहीं करता, लेकिन जल को बाज़ारू बनाकर, अब जीव–जगत् नदी–समुद्र तथा लोगों के जीवन के लिए जल उपलब्ध नहीं, तो जल स्वराज्य कहाँ ?

जल सभी का जीवन है, वह जब बाज़ारू बनता है, तब वह हिंसक हो जाता है। यह हिंसा पानी की बाज़ारू कम्पनियों ने की है। पानी सब के जीवन का हक होता है, इसे जो बाज़ार की वस्तु बनाते हैं, तो वह बहुत सारे लोगों, जीव–जन्तुओं, वनस्पति तथा नदी–समुद्र के जीवन का हक़ छीन लेता है। जिनका जल पर हक़ होता है, उनके साथ जल की हिंसा होती है। जल की हिंसा करने में, यदि हम सही मायने में देखें, तो भारत में जल का सबसे ज़्यादा सम्मान था। जल को सम्मान के साथ, अनुशासित होकर उपयोग करने की परम्परा थी। हम जल का पुनः शोधन करके, पुनरुपयोग करते थे। भारतीय लोग मानते थे कि जल ही इस पूरी सृष्टि का जीवन है, इसके बिना यह सृष्टि चल नहीं सकती, इसलिए इस भारतीय मूल ज्ञान में परम्परागत रूप से एक–दूसरे से सीख लेते थे। गाँव के बुजुर्ग अपनी अगली पीढी को सीख देते थे कि जल के साथ सद्व्यवहार करना है, जल सबका है। वैसा ज्ञान हमारे गुरु हमें दिया करते थे।

मुझसे मेरे दादा की जल की मटकी फूट गई थी। तब मुझे उन्होंने कहा था कि, जितना जल तूने बर्बाद किया है, उतने ही तेरे जीवन के दिन कम हो गये हैं। अत्यन्त प्यार करने वाले दादा अपने पोते को कितना कठिन संदेश दे रहे हैं। यही सीख भारत में जल को जीवन, जीविका और ज़मीर का तीर्थ मानने की सीख देती थी। इसी से हम जल स्वराज्य में पानीदार होकर जीते थे।

जब से भारतीय ज्ञान–तन्त्र को शिक्षा के तन्त्र में बदला गया, तब से गुरु की जगह पर शिक्षक आ गया, जो वेतन पर आधारित काम करता है। उसकी कोई चाह नहीं होती कि जल की हिंसा या अहिंसा को ध्यान में रखे। वह भी जल से कमाई के रास्त पढ़ता, सीखता और सिखाता है। जबकि भारतीय लोग जल से जीवन, जीविका और जमीर बनाना पढ़ाते, सीखते–सिखाते थे। जल को समझ कर, सहेज कर, उसका संरक्षण करते थे। वह गुरु परम्परा अब भारत में भी मिट गई है।

आधुनिक शिक्षा में जल केवल बाज़ार की वस्तु बन गया है। इस बाज़ार को यदि हमें बदलना है और जल को ठीक से समझना है; तो जल के संरक्षण के लिए, जल के प्रबन्धन के लिए, हमें जल को सामुदायिक सबके जीवन का आधार मानकर ही देखना होगा। हमने पिछले 40 वर्षों में यह देखा है कि, जहाँ–जहाँ पर लोग जल के साथ सामुदायिक कर्तव्य भाव से व्यवहार करते हैं, वहाँ आज भी बिना बाजार जल मौजूद है, जल स्वराज्य कायम है। लेकिन जहाँ लोग जल के साथ बाज़ारू रूप में व्यवहार करते हैं, वहाँ जल की हिंसा का संकट बढ़ता ही जा रहा है।

जल का प्रदूषण, जल पर अतिक्रमण और जल का शोषण, ये तीनों ही जल के साथ हिंसा है, लेकिन यह जल के साथ हिंसा मिटाने का जो काम है, वह तभी सम्भव है, जब समाज जल को अपना और अपने जीवन का आधार मानकर, जिस तरह से वह अपने शरीर के साथ व्यवहार करता है, जिस तरह से वह अपने शरीर को सहेजता है, प्यार करता है, संरक्षण करता है, उसी तरह शरीर को बनाने वाले जल के साथ भी हमें प्यार, सम्मान और समानता का व्यवहार करना होगा। उसी तरह की नीति और उसी तरह के कायदे कानून की ज़रूरत है। आधुनिक जीवन पद्धति में जो कानून बने, जो नीतियाँ बनीं, उन्होंने पानी का निजीकरण और बाज़ारीकरण करके ही देखा है। जहाँ–जहाँ जल को निजीकरण और बाजारीकरण के रूप में देखा गया, वहाँ–वहाँ लोग, बेपानी हो गये। वहाँ के लोग बेपानी होकर, लाचार, बेकार होकर उजड़ रहे हैं। वे क्लाइमेटिक रिफ्यूजी बन गए हैं और वहाँ क्लाइमेट इमरजेंसी की हालत पैदा हो गई है। जिन–जिन देशों में जल के साथ प्यार और सम्मान का व्यवहार रहा है, वहाँ अभी भी आनन्ददायी माहौल है और लोगों में खुशियाँ हैं। हरियाली से खुशहाली और खुशहाली से शान्ति का वातावरण है। ये जो जल के साथ हमारा देखने का नज़रिया था,

उस जल के नज़रिये को हम भूल गए हैं; इसीलिए आज पूरी दुनिया में जल की हिंसा के कारण तीसरा विश्व युद्ध हमारे दरवाजे पर आकर खडा हो गया है।

मैं जब भी ये सोचता हूँ कि, महात्मा गांधी यदि आज होते, जिनके जीवन का संदेश अहिंसा था, वे क्या करते? उन्होंने देश को आज़ादी दिलाने के लिए, उस ज़माने में मैनचेस्टर की कम्पनियों की लूट और हिंसा को रोकने के लिए चरखे का एक यन्त्र को अधिक उपयोग करना सिखाया था। यदि वे आज होते तो जल को सामूहिक और समान अधिकार देने वाले जल स्वराज्य के लिए ही काम करते। जल पर सब को समान अधिकार है। जितना अधिकार जल पर मनुष्य का, उतना ही पेड़–पौधों का, उतना ही जीव–जन्तुओं का, उतना ही सबको अधिकार दिला देते। इसलिए उन्होने कहा था कि, यह जो प्रकृति है, यह सब की ज़रूरत तो पूरी कर सकती हैं, लेकिन किसी एक का भी लालच पूरा नहीं कर सकती।

आज हमारे जल के बाजारू व्यापार के लालच ने ही जल की लूट और हिंसा को जन्म दिया है। जल की हिंसा का जन्म, हमारे लालची विकास से भी हुआ है। हमने जो लालची विकास अपनाया है, हमारा जो लालचीपन है, उसी ने ही हमें एक तरह से प्रकृति का लुटेरा बनाया है, शोषण करना सिखाया है, प्रदूषण करना सिखाया है और अतिक्रमण करना सिखाया है। इसलिए गांधीजी के सिद्धान्तो से अभी भी हम दुनिया में जल के अहिंसक पक्ष को समझ सकते हैं। यदि हमें अहिंसामय पक्ष समझना है, तो जल का निजीकरण रोककर, सामुदायीकरण करें और सामुदायीकरण के लिए हमें हर जगह, जहाँ भी प्रकृति ने जल दिया है; उस जल में जो पवित्रता है, उस पवित्रता को गंदगी से अलग रखें। जल में जब प्रदूषित तत्त्व मिलाते हैं, तो जल के साथ हिंसा होती है। जब हम जल के साथ हिंसा करते हैं, तो जल भी हमें हिंसा से ही प्राप्त होता है।

जल के साथ सबसे पहली हिंसा है– अच्छे शुद्ध, पवित्र जल में गंदा जल मिलाना। औद्योगिक प्रदूषित जल मिलाना ही जल के साथ हिंसा है और वह जल के साथ की हिंसा ही जीवन के साथ हिंसा होती है। इस हिंसा से हम गांधी जी के रास्ते से ही, गांधीजी की समझ से ही, बच सकते हैं। जल के साथ हिंसा ना हो, जल प्रदूषित न हो, जल को कोई लूट ना सके, उसके लिए दुनिया में जो भी जल की ज़मीन है, वह केवल जल के लिए सुनिश्चत होनी चाहिए और उस पर सबका हक़ और कर्तव्य समान होना चाहिए। उसके समान हक़ के लिए ऐसी नीति बननी चाहिए, जिससे वह जल सब को उपलब्ध हो सके। यही जल स्वराज्य का रास्ता बनता है। जब कोई राज्य भी दूसरे राज्य के जल पर क़ब्ज़ा करता है तो वह सरकारी हिंसा कहलाती है।

दुनिया में जल को किसी एक कम्पनी या एक व्यक्ति या एक राज्य को अधिक जल का मालिक बनाना, जल की हिंसा बढ़ाना है। यही जल की हिंसा तीसरे विश्वयुद्ध को बुला रही है। यदि दुनिया को अब तीसरे विश्वयुद्ध से अपने को बचाना है, तो जल की हिंसा को रोकना होगा। जल की हिंसा रोकने के लिए, जल का बाज़ारीकरण ना हो, उसका पूरी प्रकृति को उपयोग करने का समान अधिकार हो। जब तक दुनिया में मानवाधिकार की तर्ज़ पर जल का अधिकार नहीं होगा, नदियों का अधिकार नहीं होगा, जब तक दुनिया में जल पर सबका समान अधिकार नहीं होगा। जब तक दुनिया की जल की संरचनाओं पर अतिक्रमण, प्रदूषण और शोषण ही होता रहेगा, तब तक जल स्वराज्य नहीं आयेगा।

जब तक जल संरचनाओं की ज़मीन पर, जल का अधिकार नहीं होगा, तब तक दुनिया पानीदार नहीं बन सकती। दुनिया को पानीदार बनाना ही अहिंसामय रास्ता होगा। पानी प्रकृति का निर्माता है, पानी मानवता का निर्माता है। इसलिए जो निर्माता होता है, उसी को उसके उपयोग का समान अधिकार होता है। इसलिए पानी को नदियों में बहने की आज़ादी को कायम रखना और जिन देशों में पानी की उपलब्धता पर कम्पनियों ने पानी के व्यापार के लिए अपना अधिकार कर लिया है तथा इसका बाज़ारीकरण कर दिया है, उन्हें रोकना ही अहिंसामय तरीक़े से जल स्वराज्य लाने का तरीक़ा है।

पानी की हिंसा को रोकने के लिए बापू के रास्ते पर जाना और बापू से सीख लेकर पानी को सबका प्राण मानना, इस सिद्धान्त पर हमें आज आगे बढ़ना होगा। यही सिद्धान्त हमें अहिंसामय जीवन जीने की पहल करा सकेगा। यही तरीक़ा है, जब हम सब एक अहिंसामय जीवनयापन कर सकेंगे। यही सभी राज्य सरकारों को सिखाने की ज़रूरत है।

दामोदर वैली में अभी जल हिंसा है। यह हिंसा अंग्रेजों के क़ानून ने कराई है। इस क़ानून को बदलने हेतु भारत सरकार को शीघ्रता से पहल करनी चाहिए। आजकल दामोदर घाटी परियोजना केवल विद्युत व्यापार में व्यस्त है। वह अपने असली काम का स्मरण करके, काम शुरू करे। इस क़ानून का पुनर्मूल्यांकन होना चाहिए, अन्यथा अब एक और कावेरी जैसी नई बड़ी जल लड़ाई शुरु होगी।

जल सब का है। सभी को मिलना चाहिए। जिसकी ज़मीन पर बादल ने जितना जल दिया है; उसको अपनी ज़मीन पर उस बरसात के जल का उपयोग करने की नैतिक ज़िम्मेदारी और हक़दारी है। जल के लिए बराबर ज़िम्मेदारी और हक़दारी हमें प्रकृति ने प्रदान की है। हमारी सरकारें भी इसे समझें और भारत सरकार के सभी जल प्राधिकरणों को एक बार पुनः इसकी पुनर्मूल्यांकन प्रक्रिया आरम्भ करनी चाहिए। यह पुनर्मूल्यांकन प्रक्रिया जल के स्वराज्य हेतु करनी ज़रूरी है। यही गौरवशाली प्रेम से अखंड भारत बनायेगा। जल की लड़ाई राज्यों को तोडनी है। कर्नाटक–तमिलनाडू की जल लड़ाई को भी गलत अन्याय पूर्ण जल बंटवारे ने जन्म दिया था।

अपने जल स्वराज्य की कल्पना है कि, सबको सहजता से जीने–पीने के लिए जल उपलब्ध हो। इस कल्पना को राज व समाज की कर्त्तव्य परायणता ही साकार कर सकती है। वैसे तो प्रकृति ने सभी के जीवन के लिए जल उपलब्ध किया ही है, लेकिन राज व समाज के कुछ लोग इसका अतिक्रमण, प्रदूषण और शोषण करते हैं, जिसके कारण जल स्वराज्य पर संकट बढ़ रहा है। जल का निजीकरण और बाजारीकरण ही

जल स्वराज्य में सबसे बड़ी रुकावट है।

तरुण भारत संघ से जुड़ी ग्राम सभाओं ने जल स्वराज्य हेतु सवाई माधोपुर, करौली, धौलपुर, भरतपुर, कोटा, दौसा, अलवर आदि ज़िलों के गाँवों में 'ग्राम स्वराज्य' विचार के अनुरूप सर्व सम्मति से प्रस्ताव पारित करके, अपने वर्षा जल को सहेजकर, बराबरी से उपयोग करने का हक़ कायम करने की परम्परा शुरु की है। तरुण भारत संघ की परम्परा यह मानती है कि, पानी पर केवल मानव का ही अधिकार नहीं है, बल्कि इस पर पेड़–पौधे, धरती, नदी, समुद्र, तालाब व पृथ्वी पर रहने वाले सभी जीव जगत् का ही मानव से पहला हक है। बापू (महात्मा गांधी) की बुनियादी विद्या से तरुण भारत संघ ने सीख लेकर तथा लोकमान्य तिलक के ''स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है'', इस नारे को सुनकर जल का संरक्षण, सामुदायिक विकेंद्रित जल प्रबन्धन भारतीय विद्या के द्वारा किया है। भारतीय ज्ञान–तन्त्र के आधार पर लोगों ने तरुण भारत संघ और मुझे जल के समान अधिकार की बात सिखाई है।

जल स्वराज्य की भारतीय सीख से ही तरुण भारत संघ व सुखाड़–बाढ़ विश्व जनआयोग ने संयुक्त रूप से उक्त मान्यता को संयुक्त राष्ट्र संघ के दूसरे जल सम्मेलन में 22 मार्च 2023 को न्यूयार्क में रख रखा था। इसे स्वीकार किया गया और संयुक्त राष्ट्र संघ ने इसे अपने अभिलेखों में सम्मिलित कर लिया है। स्वराज्य माँगने से नहीं मिलता है। कुछ अच्छा करने व करवाने से मिलता है। जल स्वराज्य की दिशा में यह पहल विश्व स्तर पर हुई है। हमने वहाँ अपनी बात रखते हुए कहा ''जल को सरकारें नहीं बनातीं, यह तो प्रकृति प्रदत्त है।

अन्तरराष्ट्रीय, राष्ट्रीय, राज, पंचायत, नगरपालिकाएँ, पूरी दुनिया की सरकारी संस्थाओं ने अपने हित के बाज़ारु कानून बनाकर, मालिकाना हक हासिलकर लिया है। राज्य के सक्षम नेता, अधिकारी, व्यापारी मिलकर अपने हित में निर्णय लिखकर इकरारनामा बनाते है। सीधे–सादे सरल, ईमानदार राज्य बेपानी बनते हैं। चतुर–चालाक और बुद्धिमान् लोग इकरारनामों से पानी लूट लेते हैं। ऐसा मैंने पूरी दुनिया में देखा है।

इजरायल ने जॉर्डन में किया, इजिप्ट ने नायल में किया। इस प्रकार हर कोई सक्षम–सबल बनकर, जल लूटता है, जल का मालिक बनता है। सीधे–सच्चे लोग बेपानी बनकर, जल की लूट को रोक ही नहीं पाते। जैसा दुनिया में हो रहा है, वैसा ही भारत में भी हो रहा है।

भारत में सभी नदियों की जल लूट की कहानियाँ अलग–अलग हैं। कावेरी में कर्नाटक–तमिलनाडु का विवाद है, महानदी में छत्तीगढ़–उड़ीसा का, कृष्णा में आन्ध्रप्रदेश–तेलंगाना का तथा महाराष्ट्र, कर्नाटक, सभी नदियों की कहानियाँ अलग–अलग हैं, लेकिन जल लूट ही लड़ाई का मुख्य कारण बनता है।

दामोदर नदी में बिहार–बंगाल का विवाद है। जल स्वराज्य हमारे विवादों के समाधान का रास्ता है; जो सभी को सम्मान से समान अधिकार और कर्तव्य पालन सिखाता है। अब हमें जल स्वराज्य की दिशा में आगे बढ़ना है। जल स्वावलम्बन से स्वराज्य आयेगा; इस दिशा में हम सभी जुटें और आगे बढ़ें।

विश्व खोज यात्रा 2023

1 अगस्त 2023 को विश्व खोज यात्रा जलपुरुष राजेन्द सिंह जी के नेतृत्व में डॉ. अशुतोष तिवारी के साथ लासा, तिब्बत में रही। जलपुरुष जी ने बताया कि, लासा में पोटा पावर तिब्बत की राजधानी थी। पोटा पैलेश बहुत ही सुंदर है।।यहां पांचवे दलाई लामा से लेकर, तेरहवें दलाई लामा ने राज किया था। यहां के छठे दलाई लामा भारत चले गए थे, जिनका अंत तक पता नहीं चला।

यहां धार्मिक परंपरा में भगवान बुद्ध को अपना भगवान मानते हैं। यहां दो तरह के लामा होते हैं ,एक दलाई लामा है और दूसरे पांचा लामा। पांचा लामा चीन की राजधानी बीजिंग में रहते हैं और दलाई लामा भारत में रहते हैं। पांचा लामा, लासा साल में दो बार आते है।

हम तिब्बत को तीन हिस्सों में बांट कर देख सकते हैं। पहला हिस्सा है 1000 से 2000 मीटर का मैदानी केंद्रीय तिब्बत, जहां बहुत अच्छी खेती होती है, बांध और बिजली है। दूसरा उत्तर में 2000 से लेकर 3500 मीटर तक और तीसरा पूर्व 3500 से 8000 मीटर तक।

इस यात्रा का लक्ष्य था कि, यहां की संस्कृति और समाज, पानी व प्रकृति को कैसे देखता है? क्योंकि यहां का धर्म पूरा प्रकृतिमय है। भगवान बुद्ध का जो संदेश है, वह संदेश पूरे प्रकृति को ही भगवान मानने का संदेश है। बोद्ध धर्म 7000 वर्ष पूर्व भारत में आरंभ हुआ था, लेकिन 2500 साल पहले भारत से तिब्बत में आया था। तब से यहां पर भी इस धर्म को मानने वालों की संख्या बढ़ रही है। यह धर्म मंगोलिया, थाईलैंड, भारत और तिब्बत में बहुत विस्तार पाया है।

हम यह भी जानने की कोशिश कर रहे थे कि, तिब्बत में नदियों की हालत कैसी है?,इस क्षेत्र के लिए जब आगे काम करना हो तो कैसे होगा? इन सारे सवालों के लिए खोज यात्रा लासा के लंगरी होटल में ठहरी थी। यह होटल लासा नदी के तट पर स्थित है। यह लासा नदी, ब्रह्मपुत्र में मिलती है।

इस यात्रा का लक्ष्य है कि, प्रकृति को भगवान मानने वाले धर्म अब प्रकृति के साथ कैसा व्यवहार कर रहे है? यह पहाड़ों, नदियों, जानवरों और इंसानों के साथ कैसा व्यवहार कर रहे है? इनका पहाड़ और धरती कटकर समुद्र में जा रही है, तो यहां बाढ़ और सुखाड़ का प्रभाव कैसा है?

अगले दिन 2 अगस्त को यात्रा ब्रह्मपुत्र और लासा नदी के संगम पर पहुंची। यहां की सबसे बड़ी नदी का नाम यानाचांगु है। यह एवरेस्ट से निकलती है और उसके बाद इसमें नमचो, हाइपर और बहुत सारी बढ़ी नदिया मिलती जाती है। जो ब्रह्मपुत्र नदी को नद बनाती है। उसके बाद यात्रा ब्रह्मपुत्र नदी के ऊपरी हिस्से में पहुंची। ब्रह्मपुत्र की एक धारा एवरेस्ट बेस कैंप के पास चांचू दूध जैसे जल से बहती है और फिर बहुत सारी नदियों को साथ लेकर ब्रह्मपुत्र में मिल जाती है। इस नदी के जल से नीचे खेती करने का प्रयास अब नया शुरू हो रहा है। इसके ऊपर से लगभग 100मीटर नीचे चलने के बाद बहुत सारे गांव बसे हैं,जो खेती करते है।

इसके बाद यात्रा ने कोरोला ग्लेशियर के लिए प्रस्थान किया। कोरोला ग्लेशियर बहुत ही सुंदर ग्लेशियर है। रास्ते में बहुत सारे यॉर्क मिले । यार्क के बारे बताया कि, यॉर्क के शरीर का प्रतीक अंग बहुत मूल्यवान है। इसकी खाल, हड्डियां, बाल सब बहुत अच्छे से उपयोग की जाती है, इसलिए यह पर्वतमाला का हिस्सा है। आज आसमान बहुत साफ था। यह कोरोला पास 5020 मीटर की ऊंचाई पर है। ग्लेशियर के आसपास धरती पर काफी बर्फ जमा हुआ हैं। गांव में छप्पर खेती की जमीन व नए मकान तैयार हो रहे थे। यहां बहुत बड़ी–बड़ी मशीन एवम बिबिध प्रकार की छोटी मशीन भी हैं। यहां जेसीबी तो जैसे हमारे राजस्थान में घर में ट्रैक्टर होता है, वैसे यहां हर घर में जेसीबी खड़ी थी। ऐसा लगता है कि, यह देश मशीनों से भरा हुआ है। यहां काम के लिए खूब मशीन है। रास्ते में बहुत सारी छोटी धाराएं मिली, जो ऊपर से नीचे की तरफ बहुत तेजी से आती है, वहां पानी बहुत साफ दिखता है। नदियों प्रदूषण नहीं है, लेकिन मिट्टी बहुत भरी मात्रा में घुली हुई होती है। क्योंकि पहाड़ों में इतना गहरा कटाव है, जैसे हमारे चंबल की वादियों में होता है। यहां कई जगहों पर खच्चर गाड़ी और ग्लेशियर भी देखें। कुछ ग्लेशियर पर हम रुके। वर्षा और ग्लेशियर दोनों का एक साथ दर्शन करके बहुत आनंदित हुए।

3 अगस्त 2023 को विश्व खोज यात्रा सिकाते में रही। यह शहर , तिब्बत का दूसरा सबसे विकसित शहर है। यहां पर रिकोज नाम का एयरपोर्ट भी है। इसके आसपास तरबूज आदि की अच्छी खेती होती है।यहां कई शहर ऐसे है ,जहां रसायनिक खाद और दवाइयों का उपयोग नहीं किया जाता। इस शहर की आबादी 5 लाख है। यह लासा से छोटा है लेकिन ऊंचाई में 200 मीटर अधिक है। यहां की ऊंचाई 5200मीटर है। सिकाते का क्षेत्र, भारत में उत्तराखंड का एक क्षेत्र जैसा है, जहां महिलाएं अपने पति के अलावा,उनके भाइयों को भी पति जैसा मानने की परम्परा है। यह परंपरा यमनोत्री के ऊपर के हिस्से में है। यह महिला प्रमुख प्रधान क्षेत्र है। पहाड़ों में अधिक ऊंचाइयों में वाले बहुत सारे क्षेत्र में महिलाएं पतियों और परिवार को बहुत अच्छे से संभालती हैं। यह यहां की परंपरा है कि, यहां के परिवार की जो संपदा है, वह एक महिला के पास में ही रहे। पशु पालन और खेती की आय,घर का बड़ा भाई संभालता है। छोटा भाई, घर पर रहते है और बाहर कमाई के लिए भी जाते है।

यह यात्रा बहुत लंबी रही, सुबह जल्दी शुरू हुई और शाम को देर तक चली। यात्रा के दौरान बहुत सारे परमिट पास लेते हुए 3 की रात को एवरेस्ट के बेस कैंप पहुंचे। जो कि, 5200 मीटर की ऊंचाई पर है । यहां के बेस कैंप में टायलेट की सुविधा नही थी। यह यात्रा बहुत कठिन रही , क्योंकि ऑक्सीजन बहुत कम है। यहां ऑक्सीजन सिलेंडर के उपयोग से थोड़ी बोलने का हिम्मत हुई है। यहां से चलकर, एवरेस्ट कैंप पहुंचने से पहले रास्ते में सारी चीजें समझ पाए कि ,यहां के पहाड़ों में सीधे से ऊपर की तरफ ज्यादा दरारे है।

एवरेस्ट की ऊंचाई तो 8840 मीटर है। हेलरी ने 1947 में चढ़ाई की थी लेकिन उससे पहले 1943 में जोर्ज मेलिलिन ने चढ़ाई की थी, लेकिन ऊपर ही उनका मरा हुआ शरीर मिला था। उसके बाद तो चढ़ाई होती रही है। हम भारतीय लोग इसे कैलाश पर्वत भी कहते है, यहां स्थित मानसरोवर हमारे लिए तीर्थ समान है। लेकिन इसको भौगोलिक दृष्टि से देखे तो इसके तीन शिखर तिब्बत में है और चार शिखर नेपाल में है। इसका पश्चिमी हिस्सा तिब्बत और उत्तरी हिस्सा नेपाल में आता है।तिब्बत वाले हिस्से को चोमा लांबा राष्ट्रीय उद्यान कहते है। इस पर्वतमाला के साथ भारत का पुराना गहरा रिश्ता है। इसको अभी भी भारत में ही माना जाता है। जबकि आज के राजनैतिक तौर पर यह तिब्बत और नेपाल में स्थित है। इस यात्रा का लक्ष्य था कि, यह हमारी पवित्र सबसे ऊंची जगह है, इस पर हमें जाना चाहिए। इसलिए हम जहां तक जा सकते है, वहां पर जाने की कोशिश में लगे हैं। हमारी आज भी कोशिश जारी है।

4 अगस्त 2023 को एवरेस्ट बेस कैंप के चारो तरफ मोनस्ट्री और अन्य छोटी जगहों पर गई। अंत में निर्णय लिया कि,इससे ऊपर नहीं जा सकते है। हमने 25 जुलाई से आरंभ होने वाली इस यात्रा का एवरेस्ट बेस कैंप पर अंतर मूल्यांकन किया। हमें जो जानना था, वह इस यात्रा से जानने में सफल हुए है,अब इस यात्रा को वापिस नीचे की तरफ प्रस्थान कर दिया है। हम आज रात को सिकाते पहुंच जायेंगे और रास्ते में कई नई जगहों पर जायेंगे। इस यात्रा का विस्तार से वर्णन भारत लौटने पर लिखेंगे। यहां ऑक्सीजन की कमी होने के कारण, बोलना कठिन हो रहा है, शरीर में काफी थकान है, इसलिए विस्तार से यात्रा जानकारी भारत लौटने पर भेजेंगे।

जल संकट-।

Peer Reviewed

सूखते पोखर, तालाब एवं झीलेः भारत में गहराते जल संकट की आहट

❑ डॉ0 सुरभि अवस्थी, डॉ0 रेशू चौहान एवं डॉ0 संजय दिवेदी'

कृषि कार्य, ऊर्जा उत्पादन (एनर्जी प्रोडक्शन) एवं दैनिक जरूरतों के लिए साफ और सुरक्षित पानी की आवश्यकता होती है। पृथ्वी पर रहने वाला छोटा या बड़ा प्रत्येक जीव अपनी आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए जल पर निर्भर है, जो इस कहावत को सत्यार्थ करता है "जल ही जीवन है"। जनसंख्या विस्फोट, अवांछित पर्यावरण परिवर्तन एवं मानव उपभोग में दिन प्रतिदिन वृद्धि से विश्व के लगभग एक बिलियन लोग जल संकट वाले क्षेत्रों में रहने को मजबूर हैं और वर्तमान में दुनिया की आबादी का लगभग एक चौथाई हिस्सा गंभीर जल संकट से जूझ रहा है। वर्ल्ड रिसोर्स इंस्टीट्यूट (डब्लूआरआई) की रिपोर्ट के अनुसार, वर्ष 2025 तक इनकी संख्या करीब 3.5 बिलियन हो जाएगी जो एक गहन चिंता का विषय है। जल संकट की समस्या से भारत भी अछूता नहीं है। इस संदर्भ में नीति आयोग की वर्ष 2022 की रिपोर्ट के अनुसार भारत देश इतिहास के सबसे भयानक जल संकट से जूझ रहा है, क्योंकि भूजल श्रोतो का बहुत तेजी से खेतों की सिंचाई एवं अन्य दैनिक कार्यो हेतु दोहन किया जा रहा है। भारत के विभिन्न राज्यों एवं जिलों में तालाबो, पोखरो एवं झीलों की संख्या लगातार कम होती जा रही हैं, जो भविष्य में एक गम्भीर जल संकट की स्थिति उत्पन्न कर देगा।

परिचय

"जल है तो कल है", "बूंद बूंद है कीमती" जैसे संदेश वर्षो से प्रसारित एवं प्रचलित होने के बावजूद आज हम उस मोड़ पर खड़े हैं, जिस स्थान से जल संकट ना केवल भारत में अपितु वैश्विक स्तर पर स्पष्ट दिखाई दे रहा है। दुनियाँ की सबसे बड़ी झीलों अरल (।तंस `मं), कैस्पियन सागर (ब्ंेचपंद`मं), एवं जलाशयों का जल स्तर तेजी से घट रहा है जिससे वह सूखने की कगार पर पहुँच चुके हैं। एएफपी न्यूज एजेंसी द्वारा प्रसारित, कोलोराडो बोल्डर विश्वविद्यालय के एक अध्ययन के आधार पर ये बताया गया कि दुनिया की लगभग 25 प्रतिशत आबादी झीलों के बेसिन में रह रही है और जो लगातार सूख रही हैं। इस अध्ययन के अनुसार अगर ऐसा होता है तो वैष्किक स्तर पर लगभग दो अरब लोग प्रभावित होंगे। इस अध्ययन में 1992 से 2020 तक, 1,972 बड़ी झीलों और जलाशयों की सेटेलाइट तस्वीरों की मदद से जांच की गयी और परिणामस्वरूप यह पाया गया कि 53 प्रतिशत झीलों और जलाशयों के पानी में लगभग 22 गीगाटन वार्षिक दर से गिरावट हुई है। इसी सन्दर्भ में वेर्जिनिया विश्वविद्यालय के जलविज्ञानी फैन्गफैंग याओ के अनुसार प्राकृतिक झीलों के जल में गिरावट का 56 प्रतिशत श्रेय ग्लोबल वार्मिंग एवं मानव उपभोग हैं। ऐसा माना जा रहा है कि आने वाले कुछ सालो में मनुष्य एवं अन्य जीव जन्तुओ को जल संकट की बड़ी त्रासदी का सामना करना होगा।

विश्व के एक बिलियन से ज्यादा लोग जल संकट वाले क्षेत्रों में रहने को मजबूर हैं और दुनिया की आबादी का लगभग एक चौथाई हिस्सा गंभीर जल संकट से जूझ रहा है। वर्ल्ड रिसोर्स इंस्टीट्यूट (्त्प्) की रिपोर्ट के अनुसार, वर्ष 2025 तक इनकी संख्या करीब 3.5 बिलियन हो जाएगी जो एक गहन चिंता का विषय है। प्रदूषण, पर्यावरण में बदलाव, जनसँख्या विस्फोट और ग्लेशियर्स का तेजी से पिघलना इसका एक प्रमुख कारण है। जल संकट सिर्फ भारत ही नहीं बल्कि दुनिया के कई हिस्सों को अपनी चपेट में ले चुका है या ले रहा है। डब्लूआरआई के अनुसार विश्व के 17 देश गंभीर जल संकट से जूझ रहे हैं, जिसमें कतर सबसे ज्यादा जल संकट से परेशान देश है। कतर के बाद इस श्रंखला में लेबनान, ईरान, जॉर्डन, लीबिया, कुवैत, सऊदी अरब, इरिट्रिया, यूएई, सैन मैरिनो, बहरीन, भारत, पाकिस्तान, तुर्कमेनिस्तान, ओमान और बोत्सवाना देश हैं। आने वाले समय में, इन सभी देशो को 'डे जीरो' का भी सामना करना पड़ सकता है। वर्ष 2021 में दक्षिण अफ्रीका के केप टाउन को लगभग 'जीरो डे' घोषित कर दिया गया था। इसके पहले रोम की गंभीर स्थिति देखी जा चुकी है, जब दुर्लभ स्त्रोतों से पानी की व्यवस्था करनी पड़ी थी।

ग्लोबल वॉर्मिंग एवं जलवायु परिवर्तन के कारण एक तरफ जहां तापमान उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है वही दूसरी तरफ भूजल स्तर में लगातार गिरावट आ रही है। संयुक्त राष्ट्र की एक रिपोर्ट के अनुसार विश्व के लगभग दो अरब लोगों अर्थात 26 प्रतिशत आबादी अभी भी साफ और सुरक्षित पेयजल की पहुंच से दूर है। संयुक्त राष्ट्र महासचिव "एंटोनियो गुटेरेस" के अनुसार, ''विश्व आंख बंद करके एक खतरनाक रास्ते पर चल रहा है, क्योंकि 'अस्थिर जल उपयोग, प्रदूषण और अनियंत्रित ग्लोबल वार्मिंग' मानवता के जीवन रक्त को बहा रही है''। पचास वर्ष के इतिहास में पहली बार संयुक्त राष्ट्र की ओर से संयुक्त राष्ट्र 2023 जल सम्मेलन का आयोजन होगा। इस सम्मलेन में विष्व के 6500 से ज्यादा विषय विशेषज्ञ एवं भूजल वैज्ञानिक शामिल होंगे। वर्ष 2022 में नेशनल इंस्टीट्यूशन फॉर ट्रान्सफॉर्मिंग इंडिया (नीति आयोग) ने कहा था कि देश इतिहास के सबसे भयानक जल संकट से जूझ रहा है। भारत में भूजल श्रोतो का बहुत तेजी से दोहन किया गया है। इसका सबसे ज्यादा उपयोग खेतों की सिंचाई के लिए किया गया है।

भारत में तालाबों, झीलों एवं अन्य जलस्रोतों का महत्व एवं वर्तमान स्थितिः

भारत एक कृषि प्रधान देश है, तकनीकी के इस युग में देष की 60 प्रतिशत जनसंख्या खेती पर ही निर्भर है, और पानी कृषि कार्यों

'सीएसआईआर–राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान, लखनऊ–226001
Email : drs_dwivedi@yahoo.co.in

की रीढ़ है। सांस्कृतिक विभिन्नताओं से परिपूर्ण भारत देश में तालाबों को संस्कृति का एक अभिन्न अंग माना गया है और प्राचीन काल में तालाबों की पूजा की जाती थी और तालाबों, झीलों एवं अन्य जलस्रोतों को मनुष्यों की भांति नाम भी दिए जाते थे। प्राचीन व्याकरण ग्रंथो में तालाबों को उनके स्वभाव के कारण "धरम सुभाव" कहा गया है, अर्थात् तालाब के चारों ओर संस्कृतियों का विकास एवं वृद्धि होती है। खेती और पीने के साथ साथ मनुष्य अपनी अन्य अवश्यकताओ की पूर्ति के लिए तालाबों पर निर्भर थे। दुर्भाग्य की बात ये है कि जिस देश को जल समृद्ध देश कहा जाता था वही देश आज जल संकट की भयावह स्थिति का सामना कर रहा है। जनता विकराल जल संकट की तरफ बढ़ रही है क्योंकि तालाब भूमिगत जलस्तर को बनाये रखने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते थे, किन्तु वर्तमान समय में तालाबों की स्थिति शोचनीय है और तालाब केवल किताबों और सरकारी फाइलों तक ही सिमटकर रह गये है। एक अनुमान के अनुसार सन् 1947 से पूर्व भारत में लगभग 24 लाख तालाब हुआ करते थे। वर्ष 2013–14 के 5वें माइनर इरीगेशन सेंसस की रिपोर्ट के अनुसार देश में लगभग 2 लाख 14 हजार 715 तालाब रह गये हैं और लगभग 22 लाख तालाब विलुप्त हो चुके हैं। जल संरक्षण की इन प्राकृतिक धरोहरों को संरक्षित ना करने के परिणामस्वरूप वर्षा जल को भूमि के अन्दर जाने का माध्यम नही मिला और वर्षा जल कुओं, पोखर, तालाबों आदि के माध्यम से भूमिगत जल को रिचार्ज करने के बजाए नालों के माध्यम से नदियों और नदियों से समुद्र में जाकर व्यर्थ होने लगा। इसके परिणामस्वरूप भूजल का स्तर तेजी से गिरने लगा। जल का कोई अन्य श्रोत ना होने के कारण मनुष्य अपनी सभी आवश्यकताओ की पूर्ती के लिए भूजल पर ही निर्भर हो गया जिसके कारण दिल्ली, कोलकाता, चेन्नई, हैदराबाद, बेंगलुरु आदि बड़े शहरों में भूजल समाप्त होने की कगार पर पहुंच गया है। नीति आयोग ने अपनी रिपोर्ट में बताया, 2021 तक भारत के 21 बड़े शहरों से भूजल पूरी तरह से खत्म हो चुका है। इस स्थिति का प्रमुख कारण अपनी संस्कृति "तालाब एवं कुआ संस्कृति" को खोना है। भूमिगत जल स्तर गिरने में बढती हुई जनसँख्या ने भी एक अहम् भूमिका निभाई है। बढती हुई जनसँख्या की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए एक बड़े स्तर पर जंगल काटे गये और जंगलो के कटान ने इस समस्या को और अधिक गंभीर बना दिया। बड़े स्तर पर जंगलो के कटाव ने पर्यावरण का संतुलन बिगाड़ दिया जिसके फलस्वरूप मृदा अपरदन प्रारम्भ हो गया। भूमि में जल की कमी होने के कारण वनस्पतियों आदि को पर्याप्त नमी और जल नहीं मिला, इससे उपजाऊ भूमि मरुस्थलीकरण की चपेट में आ गई और भारत की करीब 24 प्रतिशत भूमि मरुस्थल में तब्दील हो चुकी है। भारत की लगभग 40 प्रतिशत जनता को स्वच्छ जल के लिए संघर्ष करना पड़ रहा है। जल शक्ति मंत्रालय के ताजा आंकड़ों के मुताबिक देश में कई स्थान ऐसे हैं जहां पानी 40 मीटर तक नीचे चला गया है। इसमें मध्यप्रदेश, राजस्थान और गुजरात जैसे राज्यों के विभिन्न गाँव एवं स्थान हैं।

बूंद बूंद को तरस्ता भारतः एक भयावह स्थिति की परिकल्पना
Indiatimes.com water crisis - Google Search

भारत में तालाबों की पूर्व एवं वर्तमान स्थितिः

पहले किसानों द्वारा जल संग्रहण के लिए कुएं के पास ही वर्षा का जल एकत्रित करने के लिए एक तालाब बनाया जाता था एवं संचयित जल का प्रयोग खेती में सिचाई एवं अन्य कार्यों के लिए भी किया जाता था। और इस प्रकार के तालाब स्थानीय भूजल स्तर को सामान्य बनाये रखते थे। सामान्यतः कुएं व तालाब, खेत के उच्चतम स्थान पर स्थित होते थे, जिससे सभी दिशाओं में गुरुत्वाकर्षण के द्वारा सिंचाई के लिए जल प्रवाहित करने में सुविधा होती थी। प्राचीन काल में तालाब ग्रामीण जन जीवन का एक जरूरी हिस्सा हुआ करते थे। यह तालाब सिंचाई की जरूरतों को पूरा करने के साथ–साथ, गांव की सामाजिक ताने–बाने की धूरी थे। धार्मिक और दैनिक दोनों उद्देश्यों के लिए उनका सम्मान किया जाता था और तालाबों को बनाए रखने की हरसंभव कोशिश की जाती थी। औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप नलकूपों का निर्माण हुआ, क्योंकि बिजली द्वारा संचालित पम्प की सहायता से भूजल का उपयोग होने लगा। देश के कई हिस्सों में बड़े–बड़े बांधों व नहरों के जल से काफी बड़े हिस्से में सिंचाई प्रारंभ हुई। परंतु कई क्षेत्रों में बांधों का निर्माण संभव न होने के कारण किसानों द्वारा सिंचाई जल के लिए नलकूपों का उपयोग बड़े पैमाने पर किया जाने लगा। मशीनों के उपयोग से परती भूमि में भी फसलें उगाई जाने लगीं जिससे सिंचाई के जल की मात्रा में काफी वृद्धि हुई। नलकूपों का प्रयोग बड़े स्तर पर होने के कारण भूजल स्तर लगातार गिरने लगा जिससे कुओं और तालाबों की प्रासंगिकता धीरे धीरे समाप्त होती चली गई। आधुनिकता की अंधी दौड़ में स्थानीय जल निकाय जैसे कुएं, झील, पोखरे व तालाब जो कभी देश के ग्रामीण परिदृश्य की खूबसूरती हुआ करते थे, वह धीरे–धीरे विलुप्त होने लगे। शहरीकरण एवं बढ़ती जनसंख्या के कारण बढ़ रही आवासों की आवश्यकता की पूर्ति के लिए असंख्य तालाबों पर अतिक्रमण कर लिया गया। जहां पहले तालाब थे, वहां अब इमारतें, घर, खेल के मैदान या कूड़े के ढेर हैं। इन तालाबों पर अतिक्रमण करके इन पर भवन निर्माण कर कालोनियां बसाई गई हैं। एक समय पर नवाबों के शहर लखनऊ में 13 हजार 37 तालाब थे। ये तालाब करीब 49280 क्षेत्रफल में फैले हुए थे, किन्तु आज लगभग 3800 हेक्टेयर पर अतिक्रमण किया जा चुका है। वर्तमान में नोएडा में न के बराबर तालाब बचे हैं। हरिद्वार जिले के भी विभिन्न तहसीलों में करीब 1668 तालाब थे, जो अब केवल 885 रह गये हैं (तालिका–1)। कई तालाबों पर अतिक्रमण कर लोगों ने बहुमंजिला भवन बना रखे हैं। जून 2018 में नैनीताल हाईकोर्ट के वरिष्ठ न्यायमूर्ति राजीव शर्मा और न्यायमूर्ति लोकपाल सिंह की खंडपीठ ने सुनवाई करते हुए तालाबों से अतिक्रमण हटाने का आदेश दिया था। इसके बाद प्रशासन ने

सक्रियता दिखाते हुए हरिद्वार तहसील में 330 में से 61 तालाबों पर, रुड़की तहसील में 680 में से 437 तालाबों पर, लक्सर तहसील में 367 में से 316 तालाबों पर और भगवानपुर तहसील में 291 में से 124 तालाबों पर अतिक्रमण होने की बात सामने आई। तहसील प्रशासन ने हरिद्वार में तीन, रुड़की में 47, लक्सर में 86 और भगवानपुर में 19 तालाबों से अतिक्रमण हटाये जाने के वाबजूद भी हरिद्वार में 58, रुड़की में 390, लक्सर में 230 और भगवानपुर में 105 तालाबों पर आज भी अतिक्रमण है। सरकार के आंकड़ों के हिसाब से झारखण्ड में करीब 10 हजार तालाब हुआ करते थे, जिसमें 7,860 तालाब ही बचे हैं। इसी प्रकार रांची जिले में करीब 900 तालाब थे, जिनकी संख्या अब मात्र 280 रह गयी हैं। राजस्थान राज्य के शहरी इलाके में तालाब और बावड़ियों की संख्या 772 है। इनमें से 443 में तो पानी है, जबकि शेष 329 बावड़िया, तालाब सूख चुके हैं या इन पर अतिक्रमण हो चुका है। जबकि छत्तीसगढ़ राज्य में एक लाख से ज्यादा तालाब थे जिनकी संख्या अब चार सौ भी नहीं रह गयी है। उत्तर प्रदेश में कुल तालाब, पोखरों की संख्या 24,354 है। जिसमें 23,309 तालाब, पोखर भरे गए हैं। जबकि पिछले पांच साल में 1045 तालाब कम हुए हैं, (तालिका–1)। यहां करीब 24 झीलें हैं, लेकिन पांच साल में 12 झीलें सूखकर खत्म हो चुकी हैं। तकरीबन यही हाल पूरे देश का है।

राज्य	जिला/राज्य	पूर्ववर्ती तालाब	वर्तमान तालाब
उत्तराखण्ड	हरिद्वार	330	272
	रूरकी	680	290
	लक्सर	367	137
	भगवानपुर	291	186
झारखण्ड	झारखण्ड	10000	7860
	रांची	900	280
राजस्थान	राजस्थान	772	443
उत्तर प्रदेश	उत्तर प्रदेश	24354	23309

नीति आयोग (नेशनल इंस्टीट्यूशन फॉर ट्रांसफॉर्मिंग इंडिया) की जून 2018 की रिपोर्ट के अनुसार, भारत जल गुणवत्ता सूचकांक में 122 देशों में 120वें स्थान पर है और लगभग 70 प्रतिशत पानी दूषित है। कंपोजिट वाटर मैनेजमेंट इंडेक्स रिपोर्ट में कहा गया है कि महत्वपूर्ण भूजल संसाधन देश की जल आपूर्ति का 40 प्रतिशत हिस्सा है और इनका तेजी से स्वरूप बदल रहा हैं। इस रिपोर्ट के अनुसार ''भारत जल संकट के अपने इतिहास में सबसे बुरे दौर से गुजर रहा है। साफ पानी न मिल पाने की वजह से हर साल लगभग दो लाख लोगों की मृत्यु हो जाती हैं। रिपोर्ट में कहा गया है कि यह ''संकट बदतर होने वाला है। वर्ष 2030 तक देश की पानी की मांग उपलब्ध आपूर्ति से दोगुनी होने का अनुमान है। जिससे करोड़ों लोगों के लिए पानी की गंभीर कमी और देश के सकल घरेलू उत्पाद में 6 प्रतिशत की कमी आने का अनुमान है। इसी संदर्भ में वर्ष 2019 में हिंदुस्तान टाइम्स की एक न्यूज के अनुसार ''गौतमबुद्ध नगर प्रशासन ने 1000 तालाबों को पुनर्जीवित करने का लक्ष्य रखा था। अप्रैल 2022 को देष के प्रधानमंत्री ने भारत की स्वतंत्रता के 75वें वर्ष को यादगार बनाने के लिए देश के प्रत्येक जिले में 75 तालाबों के निर्माण का सुझाव दिया था। यह महत्वपूर्ण है क्योंकि कई राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय रिपोर्टों ने देश को आने वाले दशकों में गंभीर जल संकट और स्थानीय जल निकायों की सुरक्षा की आवश्यकता के बारे में चेतावनी दी है। प्रधानमंत्री ने कहा, ''तापमान लगातार बढ़ने के कारण आने वाले दिनों में पानी की समस्या और गम्भीर रूप ले सकती है।

तालाबों का सूखने एवं विलुप्त होने का कारणः

तालाब एक समय पर ग्रामीण जन जीवन का अभिन्न अंग हुआ करते थे, और सांस्कृतिक धरोहर होने के कारण इनको संरक्षित भी किया जाता था, लेकिन बदलते समय के परिदृष्य में कैसे और क्यों कम होते चले गए? गम्भीरता से विचार करें तो यह समझ आता है कि इसके दो प्रमुख कारण हैं अ) निति निर्माताओ की पारंपरिक जलश्रोतो के प्रति उदासीनता एवं ब) जलवायु परिवर्तन के कारण वर्षा में आई कमी। निति निर्माताओ का पारंपरिक जलश्रोतो, जैसे कुओ, तालाबों, पोखरों एवं झीलों, के प्रति उदासीन दृष्टिकोण रहा है। यहां कहना गलत न होगा कि निति निर्माताओं के संदेशो में यह प्रमुख रूप से स्पष्ट था की पारंपरिक जल श्रोतो का जल अशुद्ध है और ग्रामीणों ने इस बात को आत्मसात कर लिया और तालाबों एवं कुओं के जल को अशुद्ध मानने लगे, जिसके परिणाम स्वरूप अपने दैनिक उपयोग के लिए भूजल पर आश्रित होते चले गये और भूजल को हैंडपंप एवं अन्य आधुनिक तकनीको का प्रयोग करते हुए दोहन करने लगे। ग्रामवासियों के मन में इन जल निकायों के लिए जो सम्मान था वह भी समाप्त होता चला गया और इनका अतिक्रमण प्रारंभ हो गया। लोगों ने इन तालाबों में कचरा डालना शुरू कर दिया। धीरे धीरे तालाबों का अस्तित्व और संस्कृति समाप्त होती चली गयी। पर्यावरण संरक्षणवादियो के अनुसार पहले गाँव से जैविक कचरा निकलता था जो भूमि की उर्वरा शक्ति को बढाता था लेकिन आज कल जैविक कचरे के स्थान पर प्लास्टिक और पॉलिथीन ने पर्यावरण को प्रदूषित कर दिया यह सारा कचरा तालाबों में डाला जा रहा है। जिससे तालाबों की स्थिति दिन प्रतिदिन दयनीय होती गयी। पर्यावरण में हो रहे बदलाव ने इस स्थिति को और दयनीय एवं गंभीर बना दिया है।

चित्र 1: अतिक्रमण के कारण गाँव में तालाबों की वर्तमान स्थिति

जल संकट से उबरने के उपायः

1. वर्तमान समय की आवश्कता है कि जल की एक एक बूंद व्यर्थ न हो और हर बूंद का खाद्य श्रृखला में उपयोग किया जाएं।
2. किसानों को ऐसे उन्नत बीजों का उपयोग करना चाहिए, जिसके लिए कम पानी की आवश्यकता हो। कृषि प्रणाली में आधुनिक तकनीकों का उपयोग करना होगा जिससे कम से कम जल व्यर्थ हो।
3. जल संकट से उबरने के लिए ग्रे और ग्रीन इनफ्रास्ट्रक्चर में इनवेस्ट करना होगा। डब्लूआरआई और वर्ल्ड बैंक के रिसर्च के मुताबिक, पाइप और ट्रीटमेंट प्लांट के इंफ्रास्ट्रक्चर को तैयार करके पानी की सप्लाई और शुद्धता दोनों बेहतर की जा सकती है।
4. जल संकट की गंभीरता को देखते हुए पानी को व्यर्थ करने के बजाय उसे रिसाइकल करने के बारे में सोचना चाहिए। इससे हम एक नया जल श्रोत बना सकते हैं।

जल संकट से बचने के लिए प्रमुख सरकारी योजनाएँः

देश में गिरते जल स्तर के संकट को हल करने के लिए तालाबों का कायाकल्प किया जाना अति आवश्यक है। इस दिशा में अनेको सरकारी और गैर सरकारी संगठन कार्यरत है और इस सन्दर्भ में अनेक जागरुकता कार्यक्रम भी चलाएं जा रहे हैं। इस दिषा में ग्रामीण जल निकायों को पुनर्जीवित करने के लिए केंद्र और राज्य सरकार द्वारा कई योजनाएं प्रारंभ की गई हैं। परिणामस्वरूप, देश के कई गांवों में तालाब निर्माण का कार्य प्रारंभ किया गया है। कई लोगों, किसानों ने स्वयं के स्तर पर भी तालाबों का निर्माण व सफाई का कार्य आरम्भ किया है। उत्तर प्रदेश सरकार ने भी गायब हो चुके तालाबों को पुनर्जीवित करने की योजना बनाकर इस दिशा में उल्लेखनीय कदम उठाया है। इसके साथ ही उन्होंने तालाबों को नया जीवन देने और उनके किनारों पर ग्राम वन लगाए जाने की भी बात कही है। दिलचस्प बात यह है कि उत्तर प्रदेश की राजधानी लखनऊ में सामाजिक कार्यकर्ताओं और गैर–सरकारी संगठनों ने अप्रैल महीने को 'जल उत्सव' के तौर पर मनाया था। महीने भर चलने वाले इस उत्सव के दौरान लगभग 2000 तालाबों को पुनर्जीवित करने का प्रयास किया गया। इस उत्सव का मुख्य उद्देश्य गोमती नदी के लगातार गिरते जलस्तर को रोकना है। गाजियाबाद नगर निगम ने भी मानसून के मौसम की शुरुआत से 28 तालाबों को पुनर्जीवित करने का उल्लेखनीय कदम उठाया है। वर्ष 2020 में उत्तर प्रदेश के झांसी में महात्मा गांधी ग्रामीण गारंटी योजना (डळछत्म्ळ।) के तहत कुल 406 जल निकायों को पुनर्जीवित करने की योजना थी। इसके अलावा दक्षिण भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में भी तालाबों को पुनर्जीवित करने का प्रयास किया जा रहा है ताकि केरल के जिलों में भूजल के गिरते स्तर को सामान्य किया जा सके। सरकार के प्रयास से तालाब बन सकता है, लेकिन इसके रखरखाव की जिम्मेदारी जन समुदाय को उठानी होगी जिससे तालाब का अस्तित्व भी बना रहे और जन समुदाय की आस्था भी जुड़ी रहे। उत्तर प्रदेश सरकार के द्वारा चलायी गयी "खेत तालाब योजना" किसानों के लिए बेहद फायदेमंद हो सकती है। इस योजना के तहत 50 प्रतिशत का अनुदान दिया जाता है। खेत तालाब योजना के प्रमुख उद्देश्य कृषकों को जल के संरक्षण एवं समुचित प्रयोग हेतु प्रेरित करना, संचित जल का सुरक्षित उपयोग करना, वर्षा जल का जल संग्रहण करके सिंचाई हेतु प्रयोग करना और भूजल स्तर में बढ़ोत्तरी करना है।

अटल भूजल योजना

अटल भूजल योजना को 2020 में 6,000 करोड़ रुपये के परिव्यय के साथ एक केंद्रीय योजना के रूप में शुरू किया गया था (1)। इसका उद्देश्य 2020–21 से 2024–25 तक भूजल संसाधनों के प्रबंधन में सुधार करना है। जल मंत्रालय ने कहा है कि भाग लेने वाले राज्यों का निर्धारण, परामर्श, भूजल की गंभीरता, इच्छा और तैयारियों के आधार पर किया गया था। यह योजना देश में जल की कमी झेल रहे सात राज्यों में लागू की गयी है।

केन्द्र सरकार ने जल संरक्षण के लिए दो प्रमुख योजनाओं को लागू किया हैः अ) जल जीवन मिशन, ब) स्वच्छ भारत मिशन – ग्रामीण (2–3)। जल जीवन मिशन का लक्ष्य 2024 तक हर घर में नल कनेक्शन के जरिए शुद्ध पेयजल उपलब्ध कराना है। इस योजना में ग्रे वाटर (प्रयुक्त जल) प्रबंधन, जल संरक्षण और वर्षा जल संचयन को भी बढ़ावा दिया जायेगा। वर्ष 2023–24 में विभाग के लिए बजटीय आवंटन का 91 प्रतिशत जल जीवन मिशन के लिए, और 9 प्रतिशत स्वच्छ भारत मिशन– ग्रामीण के लिए आवंटित है। वित्तीय वर्ष 2023–24 के लिए जल जीवन मिशन को 70,000 करोड़ निरधारित किये है जो कि 2022–23 के संशोधित अनुमान से 27 प्रतिशत अधिक है। जल शक्ति मंत्रालय को 2023–24 के लिए 97,278 करोड़ आवंटित किये है। जल संसाधन विभाग को 20,055 करोड़ रुपये आवंटित किए गए हैं, जो पिछले वर्ष के संशोधित अनुमान से 43 प्रतिशत अधिक है। पेयजल और स्वच्छता विभाग को 77,223 करोड़ रुपये आवंटित किए गए हैं, जो 2022–23 के संशोधित अनुमानों से 29 प्रतिशत अधिक है। वर्ष 2023–24 में, कुल बजटीय आवंटन का 43 प्रतिशत प्रधानमंत्री–कृषि सिंचाई योजना (पीएमकेएसवाई), 20 प्रतिशत नमामि गंगे कार्यक्रम, 17 प्रतिशत नदी जोड़ो और 10 प्रतिशत जल संसाधन प्रबंधन को आवंटित

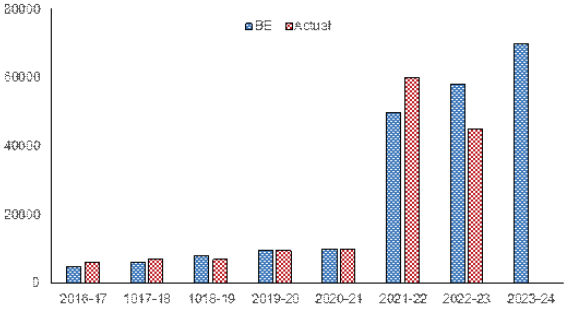

चित्र 2: पेयजल परियोजनाओं पर बजटीय आवंटन और व्यय (करोड़ रुपये में)

किया गया है (5)। सरकार, जल संसाधनों के संरक्षण, उनकी गुणवत्ता में सुधार और देश में पानी का समान वितरण सुनिश्चित करने के लिए विभिन्न योजनाओं को लागू कर रही है। जल संसाधन पर स्थायी समिति (2022) और सीएजी (2017, 2018) ने जल मंत्रालय के तहत कई योजनाओं के लिए बजट से सम्बन्धित मुद्दों को उठाया है, क्योंकि धन आवंटित होने के बावजूद यह योजनाएं प्रभावी रूप से उपयोग में नहीं है। जिसके कारण, लक्ष्य अधूरे रह जाते हैं, या अधिक समय और अधिक लागत के साथ प्राप्त किए जाते हैं।

भूजल पर निर्भरता कम करना

15वें वित्त आयोग ने सिफारिश की थी कि भूजल स्रोतों पर निर्भरता को कम करने के लिए सतही जल स्रोतों का अधिक से अधिक उपयोग किया जाना चाहिए, जिसके तहत एक राष्ट्रव्यापी जल शक्ति अभियान वर्ष 2019 में शुरू किया गया, है, जिसका उद्देश्य देश के 256 जल संकट वाले जिलों में जल संरक्षण और वर्षा जल संचयन को बढ़ावा देना है। इस अभियान को 2021 और 2022 में देश भर के सभी जिलों में फैलाया गया है। फरवरी 2023 तक, वर्षा जल संचयन संरचनाओं, वाटरशेड विकास और गहन वनीकरण जैसी गतिविधियों पर 23,717 करोड़ रुपये खर्च किए गए हैं। अप्रैल 2022 में, 15 अगस्त, 2023 तक एक लाख तालाबों का निर्माण और कायाकल्प करके, भविष्य के लिए जल संरक्षण के लिए मिशन अमृत सरोवर लॉन्च किया गया था (4)। 16 फरवरी, 2023 तक 95,000 से अधिक जगहों की पहचान की जा चुकी है। 61 प्रतिशत जगहों पर काम शुरू हो चुका है और 54 प्रतिशत काम पूरा हो चुका है। उपरोक्त वर्णित कुओं, तालाबों, झीलो एवं पोखरों की वर्तमान स्थिति एवं सरकार द्वारा चलाई जा रहीं विभिन्न परियोजनाएं और उन पर होने वाला व्यय को देखते हुए अभी भी यह प्रतीत होता है कि जल संरक्षण के लिए किये गये उपाय पर्याप्त नहीं हैं। स्थिति को दृष्टिगत रखते हुए पर्यावरण प्रबंधन, जल संरक्षण एवं कुओं, तालाबों, झीलो एवं पोखरों पर अतिक्रमण रोकने के लिए कठोर कदम उठाने होंगे। सरकार के साथ साथ जनता को भी पर्यावरण एवं जल संरक्षण के प्रति अपने कर्तव्य का अनुपालन करना चाहिए, नहीं तो वह दिन दूर नहीं जब हर इंसान के पास रहने के लिए घर तो होगा और घर में नल भी होगा, लेकिन नल में पानी नहीं होगा। इसलिए अपने भविष्य का निर्धारण हमें स्वयं करना होगा।

उपरोक्त लेख में सम्मिलित विभिन्न सन्दर्भः

1. Atal Bhujal Yojana Programme Guidelines, Ministry of JalShakti4, https://ataljal.mowr.gov.in/Ataljalimages/Atal_Bhujal_Yojana_Program_Guidelines_Ver_1.pdf.
2. Jal Shakti Abhiyan, Press Information Bureau, Ministry of Jal Shakti, July 21, 2022, https://pib.gov.in/PressReleasePage.aspx?PRID=1843395.
3. Jal Shakti Abhiyan Dashboard, accessed on February 13, 2022, https://jsactr.mowr.gov.in/.
4. Mission Amrit Sarovar, accessed on February 16, 2023, https://amritsarovar.gov.in/login#.
5. Central Ground Water Board, accessed on February 13, 2023, http://cgwb.gov.in/index.html.
"PMKSY Pradhan Mantri Krishi Sinchayee Yojana", Press Information Bureau, Ministry of Jal Shakti, August 4, 2022, https://pib.gov.in/PressReleaseIframePage.aspx?PRID=1848470

जल विमर्श-2

Peer Reviewed

जल, जीवन, जलवायु और जरूरतों के बदलते स्वरूप

❑ प्रोफेसर राणा प्रताप सिंह

पृथ्वी की विशाल जैविक विविधता, अदृश्य सूक्ष्म–जीवों से लेकर व्हेल जैसे जानवरों और विश्व भर मे फैले जंगलों, पहाड़ों, नदियों, और समुद्रों के साथ–साथ, एक साझी प्राकृतिक व्यवस्था में रह पाने से ही संभव हो पा रही है। एक ही पृथ्वी हम इतने सारे जीवों की साझी विरासत है, साझा घर है। हमारा आपस में साझा रिश्ता है। इस जैवविविधता और साझीदारी के कारण ही हमारी पृथ्वी सुंदर, अनोखी और जीवंत है। महासागरों, पहाड़ों, झीलों, नदियों, नदियों के किनारों से लेकर जंगलों, खेतों और रेत के टीलों तक में हर जगह सूक्ष्म जीव, कीड़े–मकोड़े, पशु–पक्षी, शैवाल तथा वृक्ष–लताओ की अनगिनत किस्में साथ–साथ सदियों से रहती आयी हैं, और सदियों तक आगे भी रहने वाली हैं। ये सभी जीव, साथ–साथ, एक आपसी रिश्ते और आपसी आदान–प्रदान के साथ अनादि काल से रहते आएं हैं। पृथ्वी के प्रत्येक हिस्से में किसी न किसी विशिष्ट तरह का जैविक संगठन है और इसके साझेदार जीव है, और इस जीवन–तंत्र के बाहर जल है, जमीन है, रेत है, पत्थर है, पहाड़ हैं और नीला आसमान हैं। ये सभी जीवन के इर्द–गिर्द इसलिए हैं, कि इन सबसे ही जीवन निर्मित होता है, पलता है और इसी मे यह नष्ट होता हैं। जल, जमीन, वायु, ऊर्जा और पदार्थ पृथ्वी और जीव दोनों की जीवन्तता के प्रमुख घटक हैं। जिन्होंने हम सभी जीवों को जन्म दिया है। पानी सभी जीवों के शरीर का एक प्रमुख घटक है, हालांकि, यह जीवों के निवास स्थान के अनुसार कम–अधिक होता रहता है। जलीय–जीवों में पानी अधिक होता हैं, और मरुस्थलीय जीवों में बहुत कम पानी के साथ रहने के लिए जैविक अनुकूलन हो जाता है। हमारे इस पवित्र ग्रह पर जीवन के अनगिनत स्वरूप पृथ्वी पर भी है, पृथ्वी के नीचे भी और पृथ्वी के उपर आकाश मे भी हैं। स्वच्छ–जल हर जीव के जीवन के रूप में जीवित रहने के लिए आवश्यक है। पानी हमारे जीवन में अपनी प्रमुख रासायनिक और जैविक अभिक्रियाओं के माध्यम से ऐसी अभिन्न भूमिका निभाता है, जिसमें कार्बन का ऑक्सीकरण और अपचयन लगातार होता रहता है। इनमें से एक अभिक्रिया में ऊर्जा बनती है, तो दूसरी में मुक्त होती रहती है। एक मे तत्व एवं पदार्थ जुड़ते है, दूसरे मे विखण्डित होते हैं। इसके अलावा, पानी जीवों के भीतर और उनके शरीर से परे नदियों और झरनों के रूप में प्रवाह और परिसंचरण का एक माध्यम भी है। इस तरह देखे तो पृथ्वी का यह पवित्र जल हमारे आंतरिक वातावरण और बाहरी वातावरण में समान रूप से महत्वपूर्ण है, और इसलिए यह जल हमारा सबसे पवित्र और कीमती प्राकृतिक संसाधन है।

जीवन की इसी जरूरत को पूरा करने लिए पृथ्वी विभिन्न तरह के जल स्रोतों से भरी है, परन्तु इन दिनों हम सब अपने आसपास के बढ़ते जल संकट से बहुत डरे हुए हैं। पानी की तीव्र खपत और नित्य बढ़ते प्रदूषण ने देखते ही देखते जल शरणार्थियों, वैश्विक संघर्षों और भविष्य की खाद्य सुरक्षा के साथ–साथ मानव स्वास्थ्य के लिए अनेक तरह के खतरे पैदा कर दिए हैं। पिछले कई दशकों के दौरान उच्च–उत्पादन, अधिकतम–उपभोग और अपशिष्टो के विशाल ढेर को पैदा करने वाले आर्थिक–दर्शन ने दुनिया को जलवायु परिवर्तन और वैश्विक ऊष्मीकरण के एक अभूतपूर्व और असाधारण युग में प्रवेश करने के लिए मजबूर कर दिया है। इसके परिणामस्वरूप कई जैविक प्रजातियाँ जो इस बदलाव में स्वयं को बदल पाने मे सक्षम नहीं हैं, विलुप्त होने लगी हैं। इससे हमारी अर्थव्यवस्था और पारिस्थितिकी में भारी बदलाव आने लगे हैं। पानी दिन–प्रतिदिन अधिक गर्म, मात्रा में कम, अधिक दुर्लभ, अत्यधिक प्रदूषित और नितांत महंगा होता जा रहा है, जिससे पानी की समस्या उभरती वैश्विक चिंताओं और व्यक्तियों, राज्यों, देशों और क्षेत्रों के बीच नए संघर्षों का प्रमुख कारण बनती जा रही है।

अब जब एक ओर हिमखंड अधिक पिघल रहे हैं, जल स्रोत सूख रहे हैं, तो वैश्विक ऊष्मीकरण के कारण पानी की जरूरतें तेजी से बढ़ रही हैं। पृथ्वी की एक जीवंत जलीय परिस्थितिकी निरंतर क्षीण और नष्ट हो रही हैं। लगातार बढ़ते जा रहे गर्म तापमान से मिट्टी के जीवों, पौधों, जानवरों, पालतू जानवरों और लोगों के लिए पानी की आवश्यकता अधिक होती जा रही है, और इसी तरह धरती गरम होने से कार्बन का उत्सर्जन बढ़ रहा हैं। अब हमें अधिक लोगों के लिए कृषि, पशुपालन, बागवानी और उद्योगों के लिए भी अधिक पानी की आवश्यकता है, और यह तब जब इसकी उपलब्धता दिन–ब–दिन कम रही है। वन्यजीवों और जंगलों को भी गर्म दिनों में अधिक पानी चाहिए। मौसमी तापमान और आर्द्रता में परिवर्तन जल–चक्र को बदल देता है। इसलिए, जब ऐसा विनाशकारी जलवायु परिवर्तन होता है, तो पानी की उपलब्धता अधिक अनिश्चित और समस्याग्रस्त हो जाती है। विभिन्न क्षेत्रों में बारिश के बदलते स्वरूप के कारण अधिक बाढ़ और अप्रत्याशित सूखा एक साथ एक के बाद एक होता हुआ दिख रहा है। पहाड़ों में अधिक बादल फट रहे हैं, और समुद्र तट के आस–पास अधिक तूफान आ रहे हैं। समकालीन दुनिया के अनियंत्रित आर्थिक औद्योगिक तथा व्यवसायिक विकास मॉडल के कारण प्राकृतिक जल–प्रवाह के रास्ते बुरी तरह बाधित हो गए हैं। ऐसी कई अनियोजित, अप्रत्याशित मानव निर्मित संरचनाएं हैं, जो यूँ तो दुनिया भर में बनाई गई हैं, लेकिन कम विकसित देशों में जहां जनसंख्या भार अधिक है और भारी प्रदूषण है, इनकी संख्या तेजी से बढ़ती जा रही है। अफ्रीका, एशिया, यूरोप और अमेरिका के बड़े भौगोलिक भू–भाग मे स्थित अनेक देशों में जल संकट तेजी से बढ़ रहा है और लगातार और अधिक गंभीर होता जा रहा है।

जलवायु परिवर्तन और जल संसाधनों के उपचार, लचीलेपन, अनुकूलन और शमन पर बहुत सारी बातचीत और चर्चाएं हो रही हैं। सरकारी, गैर–सरकारी और सार्वजनिक क्षेत्रों में अनेक योजयनाएँ भी चल रही हैं। कई नए पर्यावरण हितैषी तथा जनहित की पैरवी करने

प्रोफेसर, पर्यावरण विभाग, बाबा साहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, लखनऊ–226025
ई–मेलः dr.ranapratap59@gmail-com, www.ranapratap.in

वाले समूह जल और जलवायु संकटों पर काम कर रहे हैं, परंतु पानी की पवित्रता और उसके प्रबंधन पर एक समग्र दर्शन और कार्य योजना का स्वरूप अभी भी बनना है। यह पहल स्थानीय राज्यस्तरीय, राष्ट्रस्तरीय और वैश्विक, सभी स्तरों पर अलग–अलग और साथ–साथ होनी चाहिए। संयुक्त राष्ट्र संघ ने कोन्फ्रेंस आफ पार्टीज (काप) और इससे संबंधित बहस–विमर्श वाले सम्मेलनों के माध्यम से जलवायु परिवर्तन की चिंताओं पर व्यापक रूप से आख्यानों, सम्मेलनों और बातचीत का सुझाव दिया है, लेकिन स्थिति तब भी संभल नहीं पा रही है, बल्कि और बिगड़ती जा रही है। दुनिया को कम कार्बन फुटप्रिंट वाली हरित–प्रौद्योगिकियों को विकसित करके गैर–नवीकरणीय संसाधनों की खपत कम कर, पुनरोपयोग और पुनर्चक्रण के साथ हरित–चक्रीय अर्थव्यवस्था का विकल्प चुनने की है, आवश्यकता पर इनके लिए संसाधनों का पर्याप्त आवंटन और हर स्तर पर कार्यकारी और जन समूहों में अवचेतन के स्तर पर इस संकट के स्वरूप और निदान के समन्वित तरीकों का अभाव हैं। इस आवश्यक बदलाव के विश्व के तेज औद्योगिक आर्थिक विकास की गति को भी थोड़ा धीमा और अधिक तार्किक करना होगा। सत्रह घोषित सतत् विकास लक्ष्यों के माध्यम से एक नई टिकाऊ विश्व अर्थव्यवस्था बनाने का लगातार वैश्विक प्रयास चल रहा है। वर्तमान की उद्योग निर्मित कृत्रिम रसायन आधारित औद्योगिक–विकास तंत्र पर काबू पाने के लिए चल रहे उच्च कार्बन पदचिह्न, अधिक उत्सर्जन करने वाले उद्योगों और तकनीकी ढांचों को बदलना होगा और जैव–आधारित प्रौद्योगिकियों तथा नवीन अर्थव्यवस्थाओं को जमीन पर उतारना होगा।

परंतु बातचीत, लक्ष्य निर्धारण और सफलतापूर्वक उठाए गए कदमों से जमीनी स्तर पर संचालित कार्यों के बीच अभी भी ताल–मेल बन पाने मे बहुत कमी है। हमारे लिए सब कुछ तब तक अच्छा है, अगर वह हमारे अपने हितों को प्रभावित नहीं करता। पेड़ लगाने से हमारी कार्बन क्षमता और वन क्षेत्रों में में वृद्धि अवश्य हो सकती है, क्योंकि कृत्रिम उत्पादों की जगह वृक्षों से हमें अपने लिए भोजन, चारा, लकड़ी, सुगंध और दवाएं पर्याप्त रूप से उपलब्ध हो सकती हैं। परंतु जिस गति से विशाल वृक्ष एवं वन क्षेत्र नष्ट हो रहे है, ये सामयिक वृक्षारोपण उनकी भरपाई नहीं कर पाएंगे। वृक्षारोपण को वनरोपण मे बदलना होगा। भारतीय परिदृश्य में कम खपत, कम उत्सर्जन और कम आवश्यकताओं के साथ जीवन शैली को बदलने के लिए 'लाइफ' के रूप मे एक आवश्यक और आकर्षक आह्वान वर्तमान सरकार द्वारा दिया गया है, पर बड़ा प्रश्न यह है, की इसको लोगों के जीवन मे कैसे उतारा जाय।

हम जानते हैं कि भारतीय और कई अन्य पुरानी सभ्यताएँ नदियों, महासागरों, बड़े जलमार्गों और आर्द्रभूमियों के आसपास बनी हैं और प्रकृति के सामंजस्य में एक सांस्कृतिक–धार्मिक धागों मे लंबे समय से बंधी रही हैं। प्राचीन सभ्यताओं के लोग पानी, पहाड़ों, पेड़ों, सरीसृपों और कई अन्य जानवरों और फसलों की पूजा करते थे। कुछ क्षेत्रों मे अब भी इनमे से कुछ परंपराओं का प्रचलन है। अतीत में अनेक शासको और दार्शनिकों ने सतत् विकास के लिए प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण की वकालत की है। लेकिन यह सब अतीत मे भी और अब भी पारिस्थितिकी तंत्र, अर्थव्यवस्थाओं, आकांक्षाओं, खुशी और शांति को बनाए रखने के लिए पर्याप्त नहीं है। मनुष्य के मन की शांति और खुशी मात्र सम्मेलनों से नहीं आयेगी। इन सिद्धांतो और विचारों को लोगों को, उद्योगों को और सरकारों को मन से अपनाना होगा। यह उनकी सतत् चेतना मे अवधारणाओं के विकास से ही संभव हो पाएगा। इसलिए ऐसी विशिष्ट मानवीय चेतना के विकास और सततता के लिए लगातार प्रयास किए जाते रहने की आवश्यकता हैं। समृद्धि और आराम, खुशी, आनंद और शांति के पर्याय नहीं हैं। हमें अपने आर्थिक सामाजिक और सांस्कृतिक गतिविधियों की अंतर्दृष्टि, अंतर्निहित जटिलताओं और संस्थागत कार्य पद्धतियों को ठीक से समझने की आवश्यकता है, जो कम संख्या में लोगों, समुदायों और देशों को धन के विशाल संचयकर्ता और पर्यावरण के बहुमूल्य संसाधनों के विशाल उपभोक्ता के रूप में स्थापित कर चुके हैं। वे प्रकृति के नियमों और विनियमों को तोड़ते हैं। इससे सामाजिक–आर्थिक, पारिस्थितिक और सांस्कृतिक स्थिरता भंग होती हैं। विश्वभर में सरकारें अपनी राजनीतिक स्थिरता के जोखिमों पर औद्योगिक एवं प्रशासिक तंत्र पर तथा लोगों के समूह पर कोई बड़ी कार्रवाई करने सी बचती रहती हैं। कमजोर तथा असंगठित लोग, वृक्ष, पशु, पक्षी, अन्य जीव–जन्तु, नदियाँ और पहाड़, मिट्टी और पानी, सरकारों के बनाने और बिगाड़ने में समृद्ध और बुद्धिमान लोगों की तरह महत्वपूर्ण भूमिका नहीं निभा पाते, इसलिए इनकी चिंता शासन–प्रशासन में कम की जाती है।

आर्थिक और राजनीतिक शक्तियों में बैठे लोगों का दुनिया की विशाल आबादी और उनकी व्यवस्थाओं पर अधिक प्रभाव है, जो धन, राजनीतिक शक्ति, और सामाजिक प्रभाव और अन्य सुविधाओ के साथ वैश्विक–आर्थिक दर्शन के प्रवाह में हमेशा सफलता की ओर बहता है। सभी परिवर्तन तेज गति से नहीं होते, कई धीरे–धीरे होते हैं और बहुत कम संख्या में लोग परिवर्तन अभियान शुरू कर पाते हैं, या उसमें स्वतः शामिल हो पते हैं। अपने प्रयासों के सफल परिणामों के बारे में कोई भी आश्वस्त नहीं हो सकता। लेकिन यह स्पष्ट है कि संकट बहुत तेजी से बढ़ रहा है और उपाय कछुए की चाल से चल रहे हैं संकट की बढ़त और उपचार के रफ्तार का अंतर दिन–ब–दिन बढ़ता जा रहा है और इस स्थिति को बढ़ती हुई आकस्मिक आपदाएं अधिक चिंताजनक बना रही है। कहा जाता है, कि हम एक ऐसे ज्ञान–युग में रह रहे हैं, जो पृथ्वी पर एक उभरते हुए मानव युग का नेतृत्व करता है। ज्ञान प्रणाली का एक प्रमुख अवयव होने के नाते विज्ञान बाजार आधारित औद्योगिक अर्थव्यवस्था के लिए एक महत्वपूर्ण उपकरण मात्र बन कर रह गया है, जिसमें मानव समाज की सामाजिक–आर्थिक, पारिस्थितिक और सांस्कृतिक स्थिरता और धारणीयता के लिए सबसे कम चिंता है। निकट भविष्य में विकास के आर्थिक और पर्यावरणीय मॉडलों के बीच बहुत सारे मतभेद और संघर्ष हो सकते हैं, और इनमे से कई अर्थव्यवस्था, उद्योग, विकास और धन सृजन के प्रमुख घटक के रूप में पानी के इर्द–गिर्द घूमेंगे। पानी की पवित्रता, लोगों की सामूहिकता और पृथ्वी की शांति को बचाए रखने के लिए हमें अपने मन, अपने समुदायों, अपने राष्ट्रों और अपने स्वयं के दर्शन के भीतर लड़ने की आवश्यकता है। एक दर्शन और अनुसंधान पद्धति के रूप में विज्ञान और अन्य ज्ञान प्रणालियाँ हमें उच्च उत्पादन, उच्च खपत और उच्च अपशिष्ट उत्पादन के साथ गैर–धारणीय आर्थिक सामाजिक और सांस्कृतिक विकास मॉडल की बड़ी रेखाएँ खींचने में मदद कर सकती हैं, ताकि लोगों के लिए अधिक नौकरियाँ और कुछ लोगों के लिए अधिक धन पैदा किया जा सके परंतु यह मात्र थोड़े समय के लिए ही संभव हैं। यह विकास माडल पर्याप्त रूप से धारणीय नहीं हो सकता है।

प्रवाह के विपरीत तैरना और ऊंचाई की ओर गाड़ी चलाना कठिन होता है। ऐसे कार्यों में लक्ष्य हासिल करने के लिए अधिक प्रयासों की

आवश्यकता होती। कई वैचारिक समूह आगामी विकास के दर्शन के लिए मौसम अनुकूलन, मौसमी लचीलापन, नई परिस्थितकी की पुर्नकल्पना और पुनर्निर्माण से जलवायु परिवर्तन तथा पारिस्थितिकीय नवनिर्माण के बेहतर रास्ते खोज रहे हैं। इनके लिए सही दर्शन, सही ढांचे और सही कार्य विधियां अभी बनानी हैं। हम सब एक ऐसे पर्यावरण विकास तंत्र की स्थापना चाहते है, जिससे एक शांतिपूर्ण और खुशहाल दुनिया की ओर साझे रूप से बढ़ सकें। अर्थव्यवस्था, पारिस्थितिकी और समाजशास्त्र में स्थिरता प्राप्त करने के लिए आगे बढ़ने का नया रास्ता सत्तरह धारणीय विकास लक्ष्यों के रूप में प्रस्तुत किया जा रहा हैं। पर यह कागजों पर खीचें लकीरों,चित्रों तथा आलेख मात्र से नहीं होगा। हमें अपनी संस्कृति के भीतर अपनी मानवीय प्रवृत्तियों धारणीयता के गहन अंतर्रसम्बन्धों को समझना होगा तथा अपने आस–पास के जैविक तथा अजैविक अवयवों के साथ सहभागिता तथा सहयोग की संस्कृति अपनानी होगी। वैज्ञानिक विचार एवं कार्य संस्कृतियाँ हमें अपनी योजनाओं की सफलता के बेहतर और व्यापक गारंटी दे सकती है। ज्ञान अगर अहंकार पैदा करता और अनावश्यक संघर्ष पैदा करता हैं, तो उस ज्ञान के स्वरूप पर हमें पुनर्विचार कर नई ज्ञान प्रणाली रचनी होगी। विश्व के विभिन्न मृदा, जल, जलवायु और वायु क्षेत्रों के लिए प्राकृतिक जल प्रवाह और प्रभावी सतत् विकास मॉडल अभी बनाए जाने हैं। नए कार्बन सिंक और हरित वृत्ताकार अर्थव्यवस्था स्थापित करने के लिए नदियों के किनारों और नदी क्षेत्रों में नए पारिस्थितिकी तंत्र की एक बड़ी नवीन जैविक पारिस्थितिक को पुनर्जीवित तथा बहाल किए जाने की आवश्यकता है, जो दुनिया में जल प्रवाह और पारिस्थिकीय अर्थव्यवस्था को दिशा देने में सहायक होगी। लोगों और विशेषज्ञों द्वारा कई तकनीकी नवाचारों के बावजूद वाटरशेड और वर्षा जल प्रबंधन को सही स्वरूप और व्यापक आधार नहीं दिया जा सका है। कार्य–उन्मुख मिशनरी परियोजनाओं में बड़े पैमाने पर विभिन्न हितधारकों की भागीदारी के लिए अत्यधिक प्रेरक नेताओं की आवश्यकता होती है, जो अपनी प्रतिबद्धताओं और टिकाऊ प्रयासों में खुद को लगातार निर्दोष साबित रख सकें। दुनिया को संसाधन उपलब्धता के उभरते संकट से बचाने और लोगों की शांति और खुशी हासिल करने के लिए विभिन्न स्तरों पर सामूहिक नेतृत्व के ऐसे कैडरों को एक बड़े विमर्श की आवश्यकता होती है। प्रदूषित जल की उपलब्धता, उसका पुर्न उपयोग और इसकी इष्टतम उपलब्धता, आज की प्रमुख वैश्विक चिंताएँ हैं। एक दर्शन के रूप में 'पर्यावरण के लिए जीवन शैली' एक समाधान है, हालांकि, उपयुक्त कार्य के लिए सच्ची इच्छाशक्ति और उचित निष्पादन के ठोस कार्यक्रम जमीन पर स्थापित करना होगा। सभी योजनाओं और कार्य पद्धतियों को पहले हमारे मन मे स्थापित होना होगा और इसके लिए एक बड़े सामाजिक–सांस्कृतिक आंदोलन और जन–जागरूकता की आवश्यकता है। हमें तेज आर्थिक विकास की अवधारणा से उत्पन्न औद्योगिक, बाजार तंत्र और संगठनों की मुनाफाखोरी तथा प्राकृतिक संसाधनों को संश्लेषित संसाधनों में बदलकर अधिक अप्राकृतिक उत्पादों, अधिक जहरीले कचरे और अधिक उत्सर्जन से मिट्टी, जल, जमीन, हवा और जैविक तंत्र की बढ़ रही विषाक्तता को रोकना होगा, तथा जलवायु परिवर्तन से जुड़ी समस्याओं को गहराई से उनके भिन्न आयामों सहित समझकर के उसका निदान ढूँढना होगा। हमें अपनी जीवन शैली मे अधिक धन प्रवाह, अधिक से अधिक सहूलियत तथा आराम एवं अधिक से अधिक धन जनित अहंकार से मुक्त होने के तरीके ढूँढने होंगे। जल जीवन, जलवायु और जरूरतों के बदलाव स्वरूप पर एक नए विमर्श और नए दर्शन की आज पारिस्थिकीय आवश्यकता है।

पर्यावरण प्रबंधन

Peer Reviewed

माइक्रोप्लास्टिक प्रदूषणः समस्या, परिणाम और निवारक उपाय

❑ प्रोफेसर नन्द लाल

माइक्रोप्लास्टिक्स प्रमुख उभरते प्रदूषकों में से एक है और हाल ही में दुनिया भर में कई स्थानों में रिपोर्ट की गई है। माइक्रोप्लास्टिक्स और नैनो प्लास्टिक्स दोनों आमतौर पर प्लास्टिक के बड़े टुकड़ों के टूटने से बनते हैं। सूर्य और समुद्र के वातावरण से निकलने वाली अल्ट्रा–वायलेट किरणें प्लास्टिक को माइक्रोप्लास्टिक में तोड़ देती हैं। माइक्रोप्लास्टिक्स, लंबाई में 5mm (0.2 इंच से कम) प्लास्टिक के छोटे टुकड़े हैं, जो प्लास्टिक प्रदूषण के परिणामस्वरूप पर्यावरण में होते हैं। 100 nm से नीचे के कणों को नैनो प्लास्टिक कहा जाता है। माइक्रोप्लास्टिक अनेक तरह के उत्पादों में उपस्थित होता है, जिसमें सौंदर्य प्रसाधन से लेकर कृत्रिम वस्त्रों से लेकर प्लास्टिक बैग और बोतलों तक सम्मिलित हैं। पर्यावरण में प्लास्टिक माइक्रोस्कोपिक कणों में टूट कर एक स्थान से दूसरे स्थान तक परिवहन कर सकते हैं। माइक्रोप्लास्टिक का मुख्य स्रोत लैंडफिल साइट, ओपन डंपिंग और विनिर्माण इकाइयां हैं। माइक्रोप्लास्टिक आमतौर पर भारी वर्षा के दौरान फ्रैक्चर के माध्यम से जल प्रवाह के साथ भूजल प्रणाली में चले जाते हैं। उदाहरण के लिए सेप्टिक अपशिष्ट जल में हजारों माइक्रो फाइबर पॉलीमर (पॉलिएस्टर और पॉलिथीन) होते हैं। आमतौर पर कपड़े धोने से घरेलू अपशिष्ट जल में फाइबर/सिंथेटिक के छोटे–छोटे कणों का प्रवाह शुरू हो जाता है। कल्पना कीजिए कि सिर्फ कपड़े धोने के भार से कितने हजारों पॉलिएस्टर फाइबर भूजल प्रणाली में अपना रास्ता तलाशते हैं। विशेष रूप से इस तरह से एक्वीफर्स में जहां सतह का पानी भूजल के साथ आसानी से संपर्क करता है। माइक्रोब्लैड्स एक प्रकार के माइक्रोप्लास्टिक है, जो कि पॉलीइथाइलीन प्लास्टिक के बहुत छोटे टुकड़े होते हैं, जिन्हें स्वास्थ्यवर्धक और सौंदर्य उत्पादों जैसे कुछ क्लींजर और टूथपेस्ट के रूप में जोड़ा जाता है। यह छोटे कण आसानी से जल निस्पंदन प्रणालियों से गुजरते हैं। कुछ स्वच्छता और सौंदर्य प्रसाधन उत्पादों (जैसे बॉडी वॉश, शेव प्लास्टिक माइक्रोबीड्स) भी आपके घर में अपशिष्ट जल के साथ मिल सकते हैं, जो कि बाद में मिट्टी–भूजल प्रणाली में मिल जाते हैं और पर्यावरण को प्रदूषित करते हैं।

गुण–धर्म

माइक्रोप्लास्टिक्स में बहुलक श्रृंखलाओं में एक साथ बंधे कार्बन और हाइड्रोजन परमाणु होते हैं। अन्य रसायन, जैसे कि थैलेट, पॉलीब्रोमिनेटेड फिनाइल ईथर (पीबीडीई), और टेट्राब्रोमोबिस्फेनॉल ए (टीबीबीपीए), माइक्रोप्लास्टिक्स में आमतौर पर मौजूद होते हैं, और इनमें से कई रासायनिक योजक प्लास्टिक से बाहर निकल कर बाद में पर्यावरण में प्रवेश कर जाते हैं।

प्राथमिक और द्वितीयक माइक्रोप्लास्टिक्स

माइक्रोप्लास्टिक्स को दो प्रकारों में बांटा गया हैः प्राथमिक और द्वितीयक ।

प्राथमिक माइक्रोप्लास्टिक्स के उदाहरणों में व्यक्तिगत देखभाल उत्पादों में पाए जाने वाले माइक्रोबीड्स, औद्योगिक निर्माण में उपयोग किए जाने वाले प्लास्टिक छर्रों (या नर्डल्स) और सिंथेटिक वस्त्रों (जैसे नायलॉन) में उपयोग किए जाने वाले प्लास्टिक फाइबर शामिल हैं। प्राथमिक माइक्रोप्लास्टिक विभिन्न चौनलों में से किसी के माध्यम से सीधे पर्यावरण में प्रवेश करता है – उदाहरण के लिए, उत्पाद का उपयोग (व्यक्तिगत देखभाल उत्पादों को घरों से अपशिष्ट जल प्रणालियों में धोया जाता है), निर्माण या परिवहन के दौरान छलकने से अनजाने में नुकसान, या सिंथेटिक वस्त्रों से बने कपड़े धोने के दौरान घर्षण (जैसे लॉन्ड्रिंग)।

द्वितीयक माइक्रोप्लास्टिक्स बड़े प्लास्टिक के टूटने से बनते हैं। यह आमतौर पर तब होता है जब बड़े प्लास्टिक अपक्षय से गुजरते हैं, उदाहरण के लिए, तरंग क्रिया, हवा का घर्षण, और सूर्य के प्रकाश से पराबैंगनी विकिरण। प्लास्टिक की बोतलें, बैग, मछली पकड़ने के जाल और खाद्य पैकेजिंग वृहत आकार के टुकड़ों के कुछ उदाहरण हैं जो माइक्रोप्लास्टिक में विखंडित हो जाते हैं, अंततः मृदा, जल एवं हमारी श्वास वायु में अपना मार्ग खोज लेते हैं।

जीवन विज्ञान और जैव प्रौद्योगिकी स्कूल, छत्रपति शाहू जी महाराज विश्वविद्यालय, कानपुर–208012
ई–मेलः nl_pr@yahoo.co.in

विश्व में माइक्रोप्लास्टिक प्रदूषण

आर्कटिक में माइक्रोप्लास्टिक प्रदूषणः एक अध्ययन द्वारा खोजा गया था जिसमें वायु द्वारा इसके लिए एक परिवहन कारक के रूप में कार्य किया था। यह प्रथम अध्ययन होने का दावा करता है जिसमें माइक्रोप्लास्टिक्स द्वारा बर्फ के संदूषण पर डेटा शामिल है।

- एक अनुमान के अनुसार, एक औसत मानव प्रत्येक वर्ष भोजन में माइक्रोप्लास्टिक के कम से कम 50,000 कणों का उपभोग करता है।
- समुद्री प्लास्टिक प्रदूषणः इंटरनेशनल यूनियन फॉर कंजर्वेशन ऑफ नेचर (आईयूसीएन) के अनुसार, प्रत्येक वर्ष न्यूनतम 8 मिलियन टन प्लास्टिक महासागरों में पहुंच जाता है। अटलांटिक के शीर्ष 200 मीटर की माप में 6–21.1 मिलियन टन सूक्ष्म कण पाए गए।

भारत मेंः औसत भारतीय प्रत्येक वर्ष विभिन्न रूपों में लगभग 11 किलो प्लास्टिक उत्पादों की खपत करता है। यद्यपि यह एक अमेरिका या चीन की तुलना में अत्यंत कम है, फिर भी यह एक समस्या है।

माइक्रोप्लास्टिक प्रदूषण के पर्यावरण और स्वास्थ्य पर प्रभाव

मानव स्वास्थ्य परः

1. वायुजनित धूल, पीने के पानी (उपचारित नल के जल और बोतलबंद जल सहित) से माइक्रोप्लास्टिक के मानव संपर्क में आने की संभावना है।
2. माइक्रोप्लास्टिक्स हमारे पेट तक पहुंच सकते हैं जहां वे या तो उत्सर्जित हो सकते हैं, पेट और आंतों के अस्तर में संपाशित हो सकते हैं या रक्त जैसे शरीर के तरल पदार्थों में स्वतंत्र रूप से आगे बढ़ सकते हैं, जिससे शरीर के विभिन्न अंगों और ऊतकों तक पहुंच सकते हैं।
3. तंत्रिका तंत्र, हार्मोन, प्रतिरक्षा प्रणाली को नकारात्मक रूप से प्रभावित करता है और इसमें कैंसर उत्पन्न करने वाले गुण होते हैं।

समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र परः

1. समुद्री जीवों परः सेवन किए जाने पर, माइक्रोप्लास्टिक उनके पाचन तंत्र में संपाशित हो जाता है और उनके आहार व्यवहार को भी परिवर्तित कर देता है।
2. पेट में विषाक्त प्लास्टिक के संचित होने से भुखमरी तथा मृत्यु हो जाती है, विषाक्त प्लास्टिक के संचित होने से वृद्धि और प्रजनन निर्गम कम हो जाता है।
3. समुद्री प्रदूषण का आवर्धनः भारी धातुओं और कार्बनिक प्रदूषकों के लिए जल–विकर्षक गुणों के कारण एक बाध्यकारी और परिवहन कारक के रूप में कार्य करके।

माइक्रोप्लास्टिक बायोडिग्रेडेबल नहीं होते हैं। इस प्रकार, एक बार पर्यावरण में, प्राथमिक और द्वितीयक माइक्रोप्लास्टिक जमा हो जाते हैं और बने रहते हैं। माइक्रोप्लास्टिक विभिन्न प्रकार के वातावरणों में पाए गए हैं, जिनमें महासागरों और मीठे पानी के पारिस्थितिक तंत्र भी शामिल हैं। अकेले महासागरों में, सभी प्रकार के प्लास्टिक से वार्षिक प्लास्टिक प्रदूषण, 21वीं सदी की शुरुआत में 4 मिलियन से 14 मिलियन टन अनुमानित था। माइक्रोप्लास्टिक भी वायु प्रदूषण का एक स्रोत है, जो धूल और हवा में रेशेदार कणों में होता है। माइक्रोप्लास्टिक्स इनहेलेशन के स्वास्थ्य प्रभाव अज्ञात हैं। 2018 तक, समुद्री और मीठे पानी के पारिस्थितिक तंत्रों में संयुक्त रूप से, 114 से अधिक जलीय प्रजातियों में माइक्रोप्लास्टिक पाए गए थे। माइक्रोप्लास्टिक्स विभिन्न अकशेरूकीय समुद्री जानवरों के पाचन तंत्र और ऊतकों में पाए गए हैं, जिनमें केकड़े जैसे क्रस्टेशियन शामिल हैं। मछलियों और पक्षियों के पानी की सतह पर तैरने वाले माइक्रोप्लास्टिक्स को निगलने की संभावना है, जो भोजन के लिए प्लास्टिक बिट्स को भूलवश निगल जाते हैं। माइक्रोप्लास्टिक्स के अंतर्ग्रहण से जलीय प्रजातियां कम भोजन का उपभोग कर सकती हैं और इसलिए जीवन कार्यों को पूरा करने के लिए कम ऊर्जा होती है, और इसके परिणामस्वरूप न्यूरोलॉजिकल और प्रजनन विषाक्तता हो सकती है। माइक्रोप्लास्टिक्स को जूप्लंकटन और छोटी मछलियों से लेकर बड़े समुद्री शिकारियों तक समुद्री खाद्य श्रृंखलाओं में अपना काम करने का संदेह है।

माइक्रोप्लास्टिक्स पीने के पानी, बीयर और खाद्य उत्पादों में पाए गए हैं, जिनमें सीफूड और टेबल सॉल्ट शामिल हैं। आठ अलग–अलग देशों के आठ व्यक्तियों को शामिल करते हुए एक पायलट अध्ययन में, प्रत्येक प्रतिभागी के मल के नमूनों से माइक्रोप्लास्टिक बरामद किया गया। वैज्ञानिकों ने मानव के ऊतकों और अंगों में माइक्रोप्लास्टिक का भी पता लगाया है। मानव स्वास्थ्य के लिए इन निष्कर्षों के निहितार्थ अनिश्चित थे।

एम्सटर्डम, नीदरलैंड

दुनिया में पहली बार इंसान के खून के अंदर माइक्रोप्लास्टिक मिला है। वैज्ञानिकों ने अपनी जांच के दौरान पाया कि ये छोटे–छोटे कण 80 फीसदी लोगों में पाए गए। यह खोज दर्शाती है कि माइक्रोप्लास्टिक इंसान के शरीर में एक जगह से दूसरी जगह जा सकते हैं और मानवीय अंगों में जमा हो सकते हैं। हालांकि इसका इंसान के स्वास्थ्य पर क्या असर पड़ता है, इसका अभी खुलासा नहीं हो सका है। हालांकि शोधकर्ता अभी इसको लेकर बहुत चिंतित हैं क्योंकि प्रयोगशाला में माइक्रोप्लास्टिक ने इंसानी कोशिकाओं को नुकसान पहुंचाया। वह भी तब जब हम जानते हैं कि वायु प्रदूषण के कण पहले ही शरीर के अंदर प्रवेश करने के लिए जाने जाते हैं। इसकी वजह से लाखों की संख्या में लोग हर साल दुनिया भर में मर जाते हैं। पर्यावरण में बड़ी मात्रा में प्लास्टिक कचड़ा डंप किया जा रहा है और माइक्रोप्लास्टिक ने पूरी धरती को प्रदूषित कर दिया है।

नमूनों के अंदर PET प्लास्टिक पाया गया

स्थिति यह है कि ये माइक्रोप्लास्टिक दुनिया की सबसे ऊंची चोटी माउंट एवरेस्ट और सबसे गहरे समुद्र तक पहुंच चुका है। इंसान पहले ही छोटे–छोटे कण खाने, पानी और सांस के जरिए ले रहा है। इन कणों को बच्चों और वयस्कों के चेहरे में पाए गए हैं। जांच के दौरान वैज्ञानिकों ने 22 अज्ञात दानदाताओं से खून के नमूने लिए थे जो सभी वयस्क थे। इनमें से 17 नमूनों में प्लास्टिक पाया गया है। इनमें से आधे नमूनों के अंदर PET प्लास्टिक पाया गया जो ड्रिंक्स की बोतलों में इस्तेमाल किया जाता है। इसके अलावा जांच के दौरान एक तिहाई लोगों में Polystyrene पाया गया जो फूड पैकेजिंग और अन्य उत्पादों में इस्तेमाल किया जाता है। एक चौथाई खून के नमूनों में Polyethylene पाया गया है जिससे प्लास्टिक के बैग बनाए जाते हैं। इस शोध के बारे में प्रोफ़ेसर डिक वेथाक ने कहा, 'हमारा शोध पहला संकेत है कि हमारे खून के अंदर पॉलिमर के कण हैं। यह एक महत्वपूर्ण खोज है।' वैज्ञानिक अब इस शोध को और ज्यादा बढ़ाने पर विचार कर रहे हैं।

माइक्रोप्लास्टिक प्रदूषण को कम करना

1950 और 2015 के बीच, लगभग 6,300 मिलियन मीट्रिक टन प्लास्टिक कचरा उत्पन्न हुआ था। इस कचरे का अधिकांश हिस्सा, लगभग 4,900 मिलियन मीट्रिक टन, लैंडफिल और पर्यावरण में समाप्त हो गया। उस अवधि के रुझानों के आधार पर, शोधकर्ताओं ने अनुमान लगाया कि 2050 तक लैंडफिल और पर्यावरण में प्लास्टिक कचरे की मात्रा 12,000 मिलियन मीट्रिक टन तक पहुंच जाएगी। बहरहाल, बढ़ते प्लास्टिक प्रदूषण के संभावित खतरों, विशेष रूप से माइक्रोप्लास्टिक्स से होने वाले प्रदूषण को सरकारों और नीति निर्माताओं द्वारा बड़े पैमाने पर नजरअंदाज किया गया है।

इस बाधा को दूर करने में मदद करने के लिए, संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम के विशेषज्ञ पैनल जैसे संगठनों ने प्लास्टिक प्रदूषण के बारे में जागरूकता बढ़ाने और प्लास्टिक के पुनः उपयोग और पुनर्चक्रण को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से शैक्षिक अभियानों में 100 से अधिक देशों को शामिल किया। माइक्रोप्लास्टिक्स प्रदूषण सहित समुद्री कचरे को संबोधित करने के लिए अन्य अंतर्राष्ट्रीय सहकारी कार्यक्रम स्थापित किए गए हैं। 2015 में संयुक्त राज्य अमेरिका ने माइक्रोबीड–फ्री वाटर्स एक्ट पारित किया, जो प्लास्टिक माइक्रोबीड्स वाले कुल्ला–बंद सौंदर्य प्रसाधन उत्पादों के निर्माण और वितरण पर रोक लगाता है। कई अन्य देशों ने भी माइक्रोबीड्स पर प्रतिबंध लगा दिया है।

माइक्रोप्लास्टिक्स प्रदूषण को कम करने के लिए पर्यावरण में पहले से मौजूद माइक्रोप्लास्टिक्स का उपचार एक अन्य महत्वपूर्ण घटक है। इसके तहत रणनीतियों में सिंथेटिक माइक्रोप्लास्टिक पॉलिमर को तोड़ने में सक्षम सूक्ष्मजीवों का उपयोग शामिल है। कई बैक्टीरिया और कवक प्रजातियों में बायोडिग्रेडेशन क्षमताएं होती हैं, जो पॉलीस्टाइनिन, पॉलिएस्टर–पॉलीयुरेथेन और पॉलीइथाइलीन जैसे रसायनों को तोड़ती हैं। ऐसे सूक्ष्मजीव संभावित रूप से सीवेज अपशिष्ट जल और अन्य दूषित वातावरणों पर लागू किए जा सकते हैं।

आगे की राह

कमी करना, पुनः उपयोग करना और पुनर्चक्रण करनाः विश्व में माइक्रोप्लास्टिक के संकट को समाप्त करने का यही मंत्र होना चाहिए।

1. घरेलू अपशिष्टों के निष्पादन हेतु प्रायः खुले में भराव और खुली हवा में जलाने पर प्रतिबंध लगाया जाना चाहिए और इसे उपयोग किए गए प्लास्टिक के 100% संग्रहण और पुनर्चक्रण के साथ प्रतिस्थापित किया जाना चाहिए।
2. माइक्रोप्लास्टिक के विकल्प के रूप में जैव प्लास्टिक को प्रोत्साहन प्रदान करनाः यह उद्योग में निवेश और सरकारी सहायता से किया जा सकता है जिससे उत्पादन की लागत कम होगी और विभिन्न उद्योगों के लिए इसके आकर्षण में वृद्धि होगी।
3. जागरूकता सृजित करनाः स्वच्छ भारत मिशन (एसबीएम) की तर्ज पर जनता के मध्य माइक्रोप्लास्टिक व्युत्पन्न उत्पादों, हानिकारक प्रभावों और इसके उपयोग को कम करने के तरीकों के बारे में प्राथमिकता के आधार पर किया जाना चाहिए।
4. सभी हितधारकों (समुदाय, उद्योग, सरकार एवं नागरिक समाज संगठनों) के मध्य सहकारी और सहयोगात्मक साझेदारी का उद्देश्य प्रभावी प्लास्टिक अपशिष्ट प्रबंधन और पश्चातवर्ती माइक्रोप्लास्टिक प्रदूषण में कमी सुनिश्चित करना है।

माइक्रोप्लास्टिक प्रदूषण जैसे संकट से निपटने के लिए पेरिस समझौते की तर्ज पर वैश्विक सहयोग समय की मांग है। प्लास्टिक प्रदूषण को रोकने और हमारे पारिस्थितिकी तंत्र की रक्षा करने के उद्देश्य से सामूहिक सार्वजनिक प्रयास ही सुरक्षित पृथ्वी ग्रह सुनिश्चित करने हेतु आगे का मार्ग है।

जल संकट-2

Peer Reviewed

बुंदेलखंडः संकट ग्रसित क्षेत्र

❑ आकाश मौर्य

भारत एक प्राकृतिक संसाधन सम्पन्न राष्ट्र है जिसकी भूमि पर वन, नदी, झरने, झील, सागर ,महासागर उपस्थित हैं। भारत इन संसाधनो के उपयोग से अत्यंत प्रगति कर रहा है किन्तु मानव समाज लाभ हेतु इनका निरंतर दोहन कर रहा है जिससे ये सम्पदाए पृथ्वी से तेजी से नष्ट हो रही है, ठीक उसका एक उदाहरण बुन्देलखण्ड क्षेत्र है जो पानी व सूखे की समस्या को झेल रहा है प्राचीन समय में इस क्षेत्र में लगभग 4000 जल संरचनाये हुआ करती थी वर्तमान समय में इनमे से आधी जल संरचनाये मानव समाज द्वारा दोहन व प्रबंधन न होने कारण नष्ट होने की कगार पर है जो जल संरचनाये मानव जीवन को सुखमय बनाती थी आज वही संकटग्रस्त हैं।

बुन्देलखण्ड क्षेत्र उत्तर प्रदेश व मध्य प्रदेश के 13 जिलो से मिलकर बना है यह ऐसा क्षेत्र है जहाँ नदियों व जल संरचनाओं की भरमार है उचित प्रबंधन के अभाव, लोगो में जागरूकता की कमी व जल संरचनाओं के दोहन ने आम जन को साल भर पानी उपलब्धता के तमाम रास्ते को बंद कर दिया है इस क्षेत्र को चम्बल, सिन्धु, पहुज, बेतवा, केन, धसान, पयस्विनी आदि उद्गम स्रोत होते हुए भी विन्ध्य शैल समूह को जल विहीन माना जाता है।

इस क्षेत्र की महिलाओं को पानी की व्यवस्था के लिए कठिन परिश्रम करना पड़ता है क्योंकि पानी की सर्वाधिक आवश्यकता महिलाओं को होती है। ग्रामीण महिलाओं को पानी के लिए 3–4 घंटे समय बर्बाद करना पड़ता है सिर पर घड़े रखे हुए महिलाओं को अकसर बुदेलखंड में देखा गया है पानी के लिए लम्बी कतारे मीलो दूर पेयजल की उपलब्धता बुदेलखण्ड की दुर्दशा को बयाँ करता है इस क्षेत्र की सूखी नदियाँ व प्राचीन जल स्त्रोत इस बात की गवाही देते है इसका प्रमुख कारण छोटी छोटी नदियों का सूखना तथा वनों का विनाश होना है ये छोटी छोटी नदियाँ अधिकांशता पर्वत श्रृंखलाओं से या किसी बड़े चारागाह क्षेत्र से निकलती है वर्षा के मौसम में इनमे पर्याप्त मात्रा में पानी उपलब्ध रहता है किन्तु इसके पश्चात पानी की मात्रा सीमित होती चली जाती है, इनका ढाल तीक्ष्ण होता है जिससे नदियों का पानी बहकर बड़ी नदियाँ में चला जाता है। अवैज्ञानिक तरीकों से किये गए बोरबेल, तालाबो का विनष्टीकरण, जल स्रोतों की अनदेखी यह सब नदियों के सेहत के लिए हानिकारक है जब छोटी नदियाँ मरती है तो बड़ी नदियों का आस्तित्व खतरे में पड़ जाता है।नदी के रास्तो को बदलने के कारण खेती योग्य भूमि भी नष्ट हो जाती है।

बुन्देलखण्ड क्षेत्र की समस्याएं

भौगोलिक संरचना

भौगोलिक आधार पर पठार के इलाके, नदियों के द्वारा कटान,बंजर व पथरीली भूमि यहाँ की कृषि को अत्यंत जटिल बनाती हैं। सिंचाई हेतु पानी का अभाव व भीषण गर्मी होने के कारण पूरा क्षेत्र कृषि में पिछड़ा हुआ है। मुख्य रूप से इस क्षेत्र से दो नदियाँ केन व बेतवा निकलती हैं जो बाद में यमुना में मिल जाती हैं।

भू–जलस्तर में कमी

केंद्रीय जल बोर्ड के आकड़ों के मुताबिक बुन्देलखण्ड क्षेत्र में 84 फीसदी बारिश का पानी जमीन की सतह से बह जाता है इसका प्रमुख कारण क्षेत्र में पथरीली चट्टानें व प्राचीन जल संरचनाओ का प्रबंधन न होना है जिस कारण भी इस क्षेत्र के भूगर्भ– जल स्तर में कोई सुधार नही हो पा रहा है।

भूमि क्षरण

भूमि क्षरण इस क्षेत्र की प्रमुख समस्या है जिसके कारण लाखों हेक्टेयर भूमि कृषि के लिए उपयुक्त नही है। क्षरण का प्रमुख कारण तीव्र हवा, वर्षा और ढलुआ जमीन का होना है इस क्षेत्र में 60 प्रतिशत लोग गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करते हैं।

जलवायु परिवर्तन

जलवायु परिवर्तन ने पिछले कुछ वर्षों में मौसम ने असामान्य परिवर्तन कर दिए हैं जिसने लोंगो की नाजुकता व व जोखिम को बढ़ा दिया है क्योंकि इस क्षेत्र में मानसून का देर से आना, जल्दी वापस लौट जाना, दोनों के बीच लम्बा अंतराल, कुओं का सूखना इत्यादि ने यहाँ की कृषि को बिगाड़ के रख दिया है।

आधुनिक कृषि पद्धतियों के ज्ञान का अभाव

बुन्देलखण्ड क्षेत्र के किसानों को कृषि की नई पद्धतियों के ज्ञान का अभाव है और यहाँ के किसान परम्परागत कृषि पध्दतियों का प्रयोग करते हैं जिससे उनकी फसल लागत अधिक आती है, लाभ कम होता है। किसानो को सूक्ष्म सिंचाई पध्दतियों के उपयोग व सरकार द्वारा दिए जा रही छूट का भी ज्ञान नही है जिस कारण किसानो को योजना का लाभ नही मिल पाता है।

प्रोफेसर एच.एस. श्रीवास्तव, फाउण्डेशन फॉर साइंस एण्ड सोसाइटी
04, पहली मंजिल, एल्डिको एक्सप्रेस प्लाजा, शहीद पथ उतरेठिया, रायबरेली रोड, लखनऊ–226 025
ई–मेल : akashmaurya096@gmail.com

बुन्देलखण्ड की समस्या के निदान हेतु उपाय

नवीन कृषि पध्दतियों की जानकारी

बुन्देलखण्ड क्षेत्र में निवास करने वाले किसानो को नवीन कृषि पध्दतियों, उन्नतशील बीज व सूक्ष्म सिंचाई पध्दतियों की जानकारी देकर जागरूक करना। जिससे किसान इन पध्दतियों को अपनाकर अपनी लागत व जल उपयोग की दर को कम कर सके। प्रति बूँद अधिक फसल योजना को बढावा देना जिससे अधिक उत्पादन प्राप्त हो।

समुदाय को जाग्रत करना

बुदेलखंड क्षेत्र में निवास करने वाले समुदायों को पानी की समस्यायों को हल करने के उपायों, वर्षा जल संचयन की विधियों, धूसर जल प्रबंधन आदि विषयों की जानकारी देना। जल संरक्षण सजगता को बढ़ाना इन उपायों या विधियों को अपनाकर समुदाय अपने गाँव या क्षेत्र को पानी दार बना सकता है।

प्राचीन जल संरचनाओं के पुनर्जीवन हेतु प्रयास

प्राचीन जल संरचनाओं के पुनर्जीवन हेतु समुदायों को जागृत करना जिससे यह क्षेत्र पुनः पानीदार हो जाये क्यूंकि ये जल संरचनाये प्राचीन समय में लोंगो के जीवन की खुशी का प्रतीक हुआ करती थी।

वनीकरण को बढ़ावा देना

समुदाय के लोंगो को अपने जीवन काल में वृक्षों को लगाने के लिए प्रेरित करना जिससे वातावरण में होने वाले बदलाव को कम किया जा सके। किसानों को खेत की मेड पर फल व औषधीय वृक्षों के रोपण हेतू प्रेरित करना जिससे वायु शुद्धता के साथ–साथ आर्थिक लाभ प्राप्त हो।

वर्षा जल संचयन पर विशेष बल देना

बुन्देलखण्ड क्षेत्र में लोगों को वर्षा जल संचयन के लिए प्रेरित करना क्यूंकि वर्षा जल को संचय कर हम लम्बे समय तक उपयोग कर सकते हैं। वर्षा जल संचयन द्वारा भूजल स्तर में सुधार होता है तथा लम्बे समय तक तालाबो या नदियों में संचित जल का उपयोग सिंचाई व पीने के लिये जा सकता है।

हरियाणवी गीत

किसान

❑ **मंगतराम शास्त्री**

तेरा जाईयो सत्यानाश राम या किसी करी मेरी गेल
तेरा जाईयो सत्यानाश राम या किसी करी मेरी गेल
आशा पै दिन तोड़ रहा था कर दिया मटिया मेल

देख–देख गेहूं की बाली मन हुलसाया था
बेच फसल नै के के करणा जोड़ लगाया था
खो दिया जमा जमाया था जो पल दो पल में खेल

पोस माघ के म्हीने में जब पाळा पड़्या कसाई
पाणी के म्हैं खड़ा रह्या मनै कोन्या करी कोताही
तनै मेरे ऊपर किसी चलाई या पैने मुंह की सेल

पकी फसल पै ओळे पड़ग्ये सारा खेत पसरग्या
मेरी काया लीली होग्यी जणूं काळा बिषियर लड़ग्या
मेरे नाम का आज तूं मरग्या हो चाहे बेशक ठेल

खेत लिया था ठेके पै साहुकार से कर्जा ठाकै
यू तै माफ भी ना होवै ना कोए बचावै आकै
बेईमान तेरे गुण गाकै मनै के काढ्या खड़तेल

कविता कोश।

धारणीय कृषि

Peer Reviewed

मोटे अनाजों (Millets) की खेती का भारत में भविष्य

❑ डॉ. आशीष कुमार अवस्थी और डॉ. मधु प्रकाश श्रीवास्तव

भारत वैश्विक स्तर पर मोटे अनाजों का सबसे बड़ा उत्पादक देश रहा है। मोटे अनाजों की तीन किस्में, अर्थात् मोती मोटे अनाजों (मोटे अनाजों), ज्वार (ज्वार), और फिंगर मोटे अनाजों (रागी), भारत के कुल मोटे अनाजों उत्पादन का बड़ा हिस्सा हैं। भारतीय मोटे अनाजों की प्रमुख किस्मों में से, मोटे अनाजों और जोव मिलकर विश्व उत्पादन में लगभग 19 प्रतिशत का योगदान करते हैं। आंध्र प्रदेश, गुजरात, हरियाणा कर्नाटक, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश और उत्तराखंड भारत के प्रमुख मोटे अनाजों उत्पादक राज्य हैं। भारत में मील उत्पादन पर कृषि और प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद विकास प्राधिकरण (एपीईडीए) की रिपोर्ट (www.apeda.gov.in) के अनुसार, 2020 में देश में मोटे अनाजों के उत्पादन का लगभग 98 प्रतिशत हिस्सा दस राज्यों का था। 21. राज्य, अर्थात, गुजरात, हरियाणा, कर्नाटक, महाराष्ट्र, देश के कुल मोटे अनाजों उत्पादन में राजस्थान और उत्तर प्रदेश की हिस्सेदारी 83 प्रतिशत से अधिक है।

संयुक्त राष्ट्र के खाद्य और कृषि संगठन, एफएओ स्टेट 2021 द्वारा मोटे अनाजों के महत्व को रेखांकित किया गया है, जो बताता है कि दुनिया में मोटे अनाजों उत्पादन के तहत कुल क्षेत्रफल और दुनिया में कुल मोटे अनाजों उत्पादन में से भारत का हिस्सा 19 प्रतिशत और 20 प्रतिशत है। क्रमशः प्रतिशत. इसके अलावा, भारत में औसत उत्पादकता 1,239 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर (किलो/हेक्टेयर) है, जबकि विश्व औसत 1,229 किलोग्राम/हेक्टेयर है।

चित्र 1. मोटे अनाजों और पोषण संबंधी सुरक्षा

डॉ. एमएस स्वामीनाथन के नेतृत्व वाली हरित क्रांति ने भारतीय कृषि में आधुनिक तकनीक लाई। आंदोलन ने बेहतर रासायनिक–प्रजनन, मशीनीकरण के साथ उच्च उपज देने वाली किस्मों के बीजों के उपयोग की वकालत कीऔर कृषि संबंधी प्रथाओं का उद्देश्य देश के खाद्यान्न उत्पादन के लिए आत्मनिर्भरता में बदल दिया है। चावल और गेहूं के उच्च उपज वाले किस्म के बीजों पर हरित क्रांति के फोकस ने भारत की स्थिति को भोजन की कमी वाले देश से दुनिया के खाद्यान्न–अधिशेष देशों में से एक में बदल दिया। हालाँकि हरित क्रांति ने भारत को खाद्यान्न के मामले में आत्मनिर्भर बनाने का अपना मुख्य उद्देश्य हासिल कर लिया, लेकिन यह दृष्टिकोण किसी तरह मोटे अनाजों के उत्पादन और प्रसार को समवर्ती महत्व नहीं दे सका। परिणामस्वरूप, पिछले कुछ वर्षों में हमारी खाद्य टोकरी में मोटे अनाजों का अनुपात कम होता गया।

मिलेट्स में विभिन्न छोटे–बीज वाले पौधे शामिल हैं, जिनमें बाजरा, ज्वार, मक्का, कोदो आदि शामिल हैं, और इन्हें पोषक–अनाज, सुपर–फूड और श्री अन्न के रूप में भी जाना जाता है। पोषण संवर्धन, एक श्पर्यावरण अनुकूलश फसल पैटर्न, और लाभकारी विचारों में त्रिमूर्ति शामिल है जो मोटे अनाजों को बढ़ावा देने के हालिया अभियान की नींव बनाती है। इस संदर्भ में, यह लेख मोटे अनाजों के इन तीन महत्वपूर्ण पहलुओं और पृष्ठभूमि में मोटे अनाजों को बढ़ावा देने के लिए भारत सरकार द्वारा उठाए गए कदमों पर केंद्रित है।

मोटे अनाजों (Millets) की पोषण क्षमता

पोषण संबंधी असंतुलन का स्वास्थ्य पर दीर्घकालिक प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है और लोगों को चिकित्सा संबंधी चिंताओं से जूझना पड़ सकता है। कुपोषण बच्चों में बौनापन, किशोरों में एनीमिया, वयस्कों में मधुमेह और मोटापा आदि के रूप में प्रकट हो सकता है और किसी राष्ट्र की आर्थिक क्षमता का लाभ उठाने में गंभीर चुनौतियाँ पैदा कर सकता है। इस संदर्भ में, लोगों की पोषण संबंधी संवेदनशीलता को बढ़ाने के लिए मोटे अनाजों का परीक्षण और प्रयास किया गया है। मोटे अनाजों को पूरे विश्व में पोषक अनाज के रूप में स्वीकृति मिल गई है। इन पोषक अनाजों में हमारे आहार में पोषण संतुलन लाने की क्षमता है। अधिकांश मोटे अनाजों में प्रोटीन, फाइबर, विटामिन और आवश्यक खनिजों की उच्च मात्रा होती है और यह अनाज के लिए एक आकर्षक ग्लूटेन–मुक्त विकल्प है। मोटे अनाजों पोषण संबंधी सुरक्षा प्रदान कर सकता है। मोटे अनाजों के कुछ पोषण संबंधी लाभों में वसा का कम अवशोषण और कम ग्लाइसेमिक सूचकांक शामिल हैं।

सहायक प्रोफेसर, महर्षि सूचना प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, लखनऊ–226013
ई–मेल : madhusrivastava2010@gmail.com

पर्यावरण की दृष्टि से मोटे अनाजों की खेती का टिकाऊपन

उत्पादों के उच्च पोषण मूल्य को ध्यान में रखते हुए, मोटे अनाजों के बढ़े हुए उत्पादन को बढ़ाने पर नए सिरे से ध्यान केंद्रित किया जा रहा है। इन अनाजों की आवश्यकता होती हैअधिक सामान्यतः पर निर्भरता को कम करने की क्षमताचावल जैसी अधिक पानी की खपत वाली फसलें उगाईं, जिससे विविधता को बढ़ावा मिलाआहार, और सभी के लिए खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करना। मोटे अनाजों कर सकते हैंविभिन्न भू–आकृतियों और जलवायु परिस्थितियों में उगाया जा सकता है, जिससे पर्यावरणीय अनुकूलनशीलता सुनिश्चित हो सके। वे सूखे और अधिकांश कीटों के प्रति प्रतिरोधी हैं। मिश्रित फसल पैटर्न, विशेष रूप से शुष्क भूमि वाले क्षेत्रों में, मिट्टी की उर्वरता बनाए रखने के लिए अच्छा काम करते हैं। कुछ मोटे अनाजों के लिए सिंचाई की आवश्यकता धान और गेहूं की तुलना में अपेक्षाकृत कम है। उदाहरण के लिए, जबकि चावल को 100 सेमी से अधिक वार्षिक वर्षा के साथ 25 डिग्री से अधिक तापमान की आवश्यकता होती है, मोटे अनाजों को 40 से 60 सेमी वार्षिक वर्षा की आवश्यकता होती है, और ज्वार को 20 सेमी से कम वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्रों में भी उगाया जा सकता है। इसके अलावा, चावल और गेहूं की तुलना में मोटे अनाजों की बुआई और कटाई के बीच कम समय लगता है। उदाहरण के लिए, औसतन, मोटे अनाजों को 60 से 90 दिनों की आवश्यकता हो सकती है, जबकि अन्य अनाजों को 100 से 200 दिनों की आवश्यकता हो सकती है, जिससे मोटे अनाजों को फसल चक्र अपनाने के लिए अधिक आदर्श बनाया जा सकता है। इस प्रकार, मोटे अनाजों का उत्पादन जलवायु परिवर्तन के शमन और अनुकूलन से संबंधित चुनौतियों का समाधान करने के वैश्विक प्रयासों में बहुत योगदान दे सकता है।

मोटे अनाजों का मूल्य निर्धारण

रागी, ज्वार और अन्य फसलों के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) भारत सरकार द्वारा तय किया गया है। सुनिश्चित कीमतें मोटे अनाजों उत्पादकों के लिए सुनिश्चित आय सुनिश्चित करती हैं, जोखिम कम करती हैं और सूचना विषमता को दूर करती हैं। 2014–15 से 2023–24 तक, जबकि धान के लिए एमएसपी 1.6 गुना बढ़ गया, ज्वार, मोटे अनाजों और रागी के लिए क्रमशः 2.1, 2.0 और 2.5 गुना बढ़ गया (तालिका 1) जाहिर है, लागत पर सबसे अधिक रिटर्न बाजरे पर है

तालिका–1: मोटे अनाजों के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी)

फसल	एमएसपी 2014-15	एमएसपी 2022-23	एमएसपी 2023-24	उत्पादन लागत	एमएसपी में बढ़ोतरी	लागत से अधिक रिटर्न (प्रतिशत में)
धान	1360	2040	2183	1455	143	50
ज्वार	1530	2970	3180	2120	201	50
बाजरा	1250	2350	2500	1371	150	82
रागी	1530	3578	3846	2564	268	50

मिलेट्स उत्पादन को बढ़ावा के तहत खेती के क्षेत्र

2013–14 से 2021–22 तक भारत में मोटे अनाजों की खेती का क्षेत्रफल 12.3 से 15.5 मिलियन हेक्टेयर के बीच रहा है। अग्रिम अनुमान के अनुसार, 2022–23 में भारत का मोटे अनाजों उत्पादन 159 लाख टन था। सरकार ने 2022–23 के लिए जो उत्पादन लक्ष्य तय किया है205 लाख टन था मोटे अनाजों के कुल उत्पादन के संदर्भ में, आंकड़े 2018–19 में 137 लाख टन से बढ़कर 2021–22 में 160 हो गए, इसी अवधि में उत्पादकता 1,163 किलोग्राम/हेक्टेयर से बढ़कर 1,239 किलोग्राम/हेक्टेयर हो गई।

भारत में, मोटे अनाजों विभिन्न राज्यों में उगाया जाता है, तालिका–2 उन राज्यों को प्रस्तुत करती है जहां 2021–22 के तहत मोटे अनाजों की खेती का क्षेत्रफल, मोटे अनाजों (उपससमजे) के तहत खेती और इसका उत्पादन (मोटे अनाजों) सबसे अधिक था।

तालिका–2: 2021–22 में मोटे अनाजों के तहत खेती का सबसे बड़ा क्षेत्र और उच्चतम मोटे अनाजों उत्पादन

राज्य	बाजरा	ज्वार	रागी
क्षेत्रफल (हेक्टेयर)	राजस्थान (3736)	महाराष्ट्र (1649)	कर्नाटक (846)
उत्पादन (टन)	राजस्थान (3740)	महाराष्ट्र (1558)	कर्नाटक (1127)

स्रोतः 15.03.2023 लोकसभा अतारांकित प्रश्न संख्या 2447 पर उत्तर में।

मोटे अनाजों की खेती का भारत में निष्कर्ष

भारतीय मोटे अनाजों ने अंतरराष्ट्रीय बाजारों में सम्मानजनक मांग दर्ज की है। जैसा कि हमारे माननीय प्रधान मंत्री ने बताया है, भारतीय मोटे अनाज अब एक स्वीकृत ब्रांड बन गए हैं और अपने तरीके से आर्थिक समृद्धि का रास्ता अपना रहे हैं। समय की मांग है कि पूर्व–उत्पादन से लेकर प्रसंस्करण और विपणन तक एक उपयुक्त आपूर्ति–श्रृंखला और मूल्य–श्रृंखला का उद्भव सुनिश्चित किया जाए। भारत से निकलने वाली आपूर्ति श्रृंखला को मजबूत करने के लिए, एपीडा ने ई–कैटलॉग प्रकाशित करने, क्षमता–निर्माण कार्यक्रम आयोजित करने और विभिन्न अंतरराष्ट्रीय व्यापार मेलों के दौरान बिजनेस टू बिजनेस (बी2बी) बैठकों के माध्यम से भारतीय मोटे अनाज को बढ़ावा देने का बीड़ा उठाया है। एक चुनौती जिसकी जरूरत हैस्वच्छता और पादप स्वच्छता उपायों के साथ निर्यात के अनुपालन पर तेजी से ध्यान दिया जाना चाहिए, जिससे भारत में उत्पादित मोटे अनाजों की वैश्विक मांग में वृद्धि होगी।

मोटे अनाजों पर जो एक केंद्रित दृष्टिकोण अपनाया गया है वह उत्पादकों और उपभोक्ताओं दोनों के प्रयोग के लचीलेपन पर बहुत अधिक निर्भर करता है। कृषि–खाद्य संबंधी मुद्दों पर काबू पाने, बढ़ी हुई उत्पादकता के साथ उच्च उत्पादन सुनिश्चित करने, घरेलू मांग को पूरा करने और निर्यात के माध्यम से विदेशी मुद्रा अर्जित करने में सक्षम होने के लिए इस तरह के दृष्टिकोण की आवश्यकता है। प्रभावी रूप से, मोटे अनाजों की मांग इसकी कीमत पर निर्भर करती है; इसके स्थानापन्न अनाज की कीमत; उपभोक्ताओं का स्वाद और प्राथमिकताएँ आदि। सरकार ने उपभोक्ताओं को मोटे अनाजों उपलब्ध कराने की नीति अपनाई है। यदि इस उपलब्धता को सामर्थ्य के विचार के साथ भी जोड़ दिया जाए, तो एक सुनिश्चित बाजार की उम्मीद की जा सकती है। मोटे अनाजों पर नए सिरे से जोर देने से नागरिकों के लिए बेहतर पोषण, पर्यावरणीय स्थिरता, मिट्टी की उर्वरता बनाए रखने और किसानों के लिए बेहतर आय के रूप में सकारात्मक प्रभाव पैदा करने की क्षमता है।

ढाई अक्षर की क्षमता

❑ **अज्ञात**

ढाई अक्षर प्रेम का
दुनिया जाने सोय
ढाई अक्षर के ब्रह्मा
और ढाई अक्षर की सृष्टि।
ढाई अक्षर के विष्णु
और ढाई अक्षर की लक्ष्मी।
ढाई अक्षर के कृष्ण
और ढाई अक्षर की दुर्गा
और ढाई अक्षर की शक्ति।
ढाई अक्षर की श्रद्धा
और ढाई अक्षर की भक्ति।
ढाई अक्षर का त्याग
और ढाई अक्षर का ध्यान।
ढाई अक्षर की तुष्टि
और ढाई अक्षर की इच्छा।
ढाई अक्षर का धर्म
और ढाई अक्षर का कर्म।
ढाई अक्षर का भाग्य
और ढाई अक्षर की व्यथा।
ढाई अक्षर का ग्रन्थ
और ढाई अक्षर का सन्त।
ढाई अक्षर का शब्द
और ढाई अक्षर का अर्थ।
ढाई अक्षर का सत्य
और ढाई अक्षर की मिथ्या।

ढाई अक्षर की श्रुति
और ढाई अक्षर की ध्वनि।
ढाई अक्षर की अग्नि
और ढाई अक्षर का कुण्ड।
ढाई अक्षर का मन्त्र
और ढाई अक्षर का यन्त्र।
ढाई अक्षर की श्वांस
और ढाई अक्षर के प्राण।
ढाई अक्षर का जन्म
ढाई अक्षर की मृत्यु।
ढाई अक्षर की अस्थि
और ढाई अक्षर की अर्थी।
ढाई अक्षर का प्यार
और ढाई अक्षर का युद्ध।
ढाई अक्षर का मित्र
और ढाई अक्षर का शत्रु।
ढाई अक्षर का प्रेम
और ढाई अक्षर की घृणा।
जन्म से लेकर मृत्यु तक
हम बंधे हैं ढाई अक्षर में।
हैं ढाई अक्षर ही वक्त में
और ढाई अक्षर ही अन्त में।
समझ न पाया कोई भी है
रहस्य क्या ढाई अक्षर में।

– संशोधन : प्रोफेसर राणा प्रताप सिंह

कृषि विमर्श

Peer Reviewed

धान की अच्छी उपज के लिए खर–पतवार प्रबंधन

❑ डॉ. शिव मंगल प्रसाद एवं पंकज कुमार सिंह

चावल हमारे भारतवर्ष का प्रमुख खाद्यन्न फसल है एवं यहाँ के लोगों के प्रत्येक दिन के भोजन का अभिन्न अंग है.हमारे भोजन से चावल को अलग करके गरीब एवं मध्यम वर्ग के लोगों के लिए भोजन की परिकल्पना नहीं की जा सकती है.भारत में उगाये जाने वाले सभी प्रकार के खाद्यान्नों में चावल का स्थान प्रथम है। हमारे देश के वार्षिक खाद्यान उत्पादन में चावल का योगदान लगभग 43 प्रतिशत से भी अधिक है। यह विभिन्न प्रकार की मिट्टियों, जलवायु, भू–परिस्थितियों एवं परिस्थितिकियों में उगाई जाती है। इसकी खेती भारत के लगभग सभी हिस्सों में की जाती है और सभी जगहों पर इसे खर–पतवारों से बहुत बड़ी चुनौती दी जाती है। धान के उन्नत प्रभेदों की औसत उपज क्षमता लगभग 45 से 50 क्विंटल प्रति हेक्टर है पर यदि राष्ट्र का औसत उपज दर देखें तो यह 20 क्विंटल प्रति हेक्टर ही है। उपज में कमी के कई कारक हो सकते है पर खर–पतवार उनमें से मुख्य हैं और वैज्ञानिकों तथा शोधकर्ताओं के लिए भी गहन शोध की वस्तु है।

हमारे खेतों में बोये या लगाये गए फसलों के साथ कुछ अवांछित पौधे उग आतें हैं जिनको हम खर–पतवार कहतें हैं। ये हमारी फसलों के साथ उगकर पोषक तत्वों, जल, सूर्य के प्रकाश, स्थान, वायु इत्यादि के लिए प्रतिस्पर्धा करके फसलों की उपज में कमी लातें हैं। रोग और कीट से होने वाली आक्रांतता को हम सीधी आँखों से प्रत्यक्ष रूप से देख पातें हैं पर खर–पतवारों से हुई हानियाँ अप्रत्यक्ष होती है। पूरे विश्व में फसलों को विभिन्न जैव घटकों से हुई हानिओं में खर–पतवारों से हुई हानियों का आकलन 33 प्रतिशत, कीटों से 26 प्रतिशत एवं रोगों से 20 प्रतिशत किया गया है।

धान की फसल में विभिन्न प्रकार के खर–पतवार पाए जाते हैं क्योंकि इसकी खेती कई प्रकार की भू–परिस्थितियों एवं परिस्थितिकियों में की जाती है। खर–पतवारों के प्रबंधन के लिए उनकी जानकारी भी अति आवश्यक है तभी कारगर उपाय अपनाये जा सकते हैं।

वर्षाश्रित उपराऊँ भूमि–

वर्षाश्रित उपराऊँ भूमि में एक वर्षीय एवं बहु–वर्षीय, दोनों प्रकार के खर–पतवारों की बहुलता होती है। ऐसी परिस्थितिकी में यदि हम खर–पतवारों को धान की फसल के साथ यूँ ही बढने दें तो उपज में हानि 51 से 78 प्रतिशत आंकी गयी है और सीधी बुआई के सन्दर्भ में यह 81 से 100 प्रतिशत तक हो सकती है। आरम्भ के 30 दिन फसल–खर –पतवार प्रतिस्पर्धा की क्रांतिक अवस्था है। इसके बाद किये गए नियंत्रण से उपज तो होगी पर उसमें कुछ ह्रास होगा। उपराऊँ भूमि में पाए जाने वाले खर–पतवारों में दूब, मोथा कुल की विभिन्न जातियां, मकराघास, सामाघास, गुजगुजा, महकउआ, जंगलीधान, कोमोलिना, सेटारिया इत्यादि है। ये धान के बढ़वार वाली विभिन्न अवस्थाओं में क्रमवार आकर उपज को बुरी तरह से प्रभावित करते हैं। इन खर–पतवारों में कई ऐसे भी हैं जो अनेक प्रकार के रोगों एवं कीटों के आश्रयदाता होते हैं, उनसे संक्रमित होकर भी उपज प्रभावित होती है। हमारे खेतों में पहले से उपलब्ध या फिर ऊपर से दिए गए पोषक तत्वों की एक बड़ी मात्रा का अवशोषण कर ये फसल की उपज में कमी लाते हैं।

खर–पतवार नियंत्रण की कोंई एक विधि को अपनाकर हम उचित या अपेक्षित लाभ नहीं पा सकते हैं अतरू हमें समन्वित नियंत्रण विधि को अपनाने की जरुरत है जो इस प्रकार है–

खर–पतवार नियंत्रण की निवारक विधियाँ–

- खेत की ग्रीष्म कालीन गहरी जुलाई–अप्रैल–मई या जेठ–बैशाख के महीनों में मिटटी पलटने वाले हल से गहरी जुताई करने से खेत या आक्रांत क्षेत्र में सभी प्रकार के खर–पतवार कम होते हैं।
- पूरी तरह से सड़ी गोबर की खाद यानि कम्पोस्ट का ही प्रयोग खेतों में करें। अनपचे, कच्चे या अच्छी तरह से कम्पोस्ट नहीं बने गोबर में मवेशी द्वारा खाए घास एवं खर–पतवार के बीज गोबर के मध्यम से खेतों में पहुँच जाते हैं।
- बीज की खरीददारी किसी प्रतिष्ठित संस्थान या विश्वसनीय केंद्र से ही करें। वैसे बीजों में खर–पतवार के बीज होने की संभावनाएं नहीं के बराबर रहती है। कभी–कभी हम किसी अच्छे कृषक से बीज खरीद लाते हैं या फिर घर के बीज का प्रयोग करतें हैं तब बीज बुआई से पूर्व उसे जिस किसी भी तरह से साफ कर लें।
- बुआई से पूर्व बीजों को नमक के दो प्रतिशत घोल (20 ग्राम नमक और 1 लीटर पानी) में डुबोकर 20 मिनट के लिए रखें। इससे खखरी, रोग–ग्रस्त एवं अन्य प्रकार के पदार्थ सहित खर–पतवार के बीज भी तैरने लगेगें, उन्हें छान कर फेंक दें। नीचे बैठे बीजों को

भा.कृ. अनु.प. – केन्द्रीय वर्षाश्रित उपराउं भूमि चावल अनुसंधान केंद्र, हज़ारीबाग–225301
Email : smp_crri@yahoo.in

साफ पानी से खूब अच्छी तरह धोकर प्रयोग में लायें।

- खर–पतवार से भरे खेत या आक्रांत क्षेत्र की मिटटी को नए खेत या कृषि गत खेतों में न लायें।
- खेत के मेढ़ों पर की साफ दृसफ़ाई, सिंचाई वाली नालियों की साफ–सफ़ाई, कृषि में प्रयोग होने वाले कृषि यंत्रों की साफ–सफ़ाई करते रहना चाहिए।
- यदि फूल आने से पहले खर–पतवार को उखाड़ कर नष्ट कर दिया जाये और ये प्रक्रिया लगातार तीन–चार वर्ष तक दोहराई जाये तो आने वाले वर्षों में इनकी संख्या बहुत कम हो जायेगी।

खर–पतवार नियंत्रण की यांत्रिक विधियाँ–

- कतारों में सीधी तरह बुआई की हुई धान की फसल में खुरपी की सहायता से खर–पतवारों को निकाला जा सकता है।
- वैसी कतारों में कोनो वीडर ,फिंगर वीडर या फिर पैडी वीडर चला सकते हैं जिससे घासों का दमन होता है, जड़ो में वायु का आवा गमन बढ़ जाता है तथा साथ ही साथ अच्छी मात्रा में जैव पदार्थों की उपलब्धता होती है–
- साधारनतया धान की फसल में 20 से 25 दिनों पर पहली एवं 40 से 45 दिनों पर दूसरी निराई–गुडाई खुरपी की मदद से करते हैं जबकि वीडरों से करना हो तो पहली 15 से 20 दिनों पर एवं दूसरी 35 से 40 दिनों पर करतें हैं।

खर–पतवार नियंत्रण की सस्य विधियाँ

- धान की सीधी बुआई करने से पूर्व खेत की तैयारी दो – तीन जुताई करके एवं घास–खर –पतवारों के अवशेषों को चुन कर नष्ट करके करें।
- खेत की दो–तीन जुताई करके एवं समतल करके कुच्छ दिनों के लिए छोड़ दें। वैसे में घास–खर–पतवारों का जमाव वर्षा आरम्भ होने के बाद तेजी से होता है। इन्हें शाक नाशियों या खर–पतवार नाशियों के घोल (पाराक्वाट या ग्लाईफ़ोसेट 1 लीटर 500 लीटर पानी प्रति हेक्टेयर) के छिडकाव से या पुनरू जुताई करके नष्ट किया जा सकता है इसे स्टेल सीड बेड तकनीक कहतें हैं। इससे खेत में मुख्य फसल की बुआई के पश्चात् खर–पतवारों की आक्रांतता बहुत कम हो जाती है।
- वर्षाश्रित उपराऊँ भूमि में बुआई के समय नत्रजन प्रयोग नहीं करना चाहिए क्योकि यह खर दृ पतवारों के वृद्धि में मदद करतें हैं। बुआई के 20, 40 एवं 60 दिनों बाद नत्रजन की अनुसंसित मात्रा को तीन बराबर भागों में बांटकर खड़ी फसल में उपरिवेषित करें।
- वर्षाश्रित उपराऊँ भूमिओं में साधारणतया छिटकवा विधि से बुआई की जाती है जिसमें बाद में खर –पतवारों की आक्रांतता बहुत बढ़ जाती है। सीधी बुआई सीड ड्रील मशीन या कतारों में लाइन खींच कर की जा सकती है जिससे खर–पतवारों की आक्रांतता कम होगी और यदि हुई भी तो फिंगर वीडर या कोनो वीडर चलाकर उनका दमन किया जा सकता है।
- धान की कुछ ऐसी किस्में भी हैं जिनकी वृद्धि बहुत शीघ्र होती है जो कि जल्द बढ़कर खर–पतवारों की बढ़वार को प्रभावित करतें हैं। वैसी किस्मों में वर्षाश्रित उपराऊँ भूमिओं के लिए हीरा, वंदना, अंजली, अन्नदा सहभागी धान इत्यादि हैं।.
- फसल चक्र अपनाकर–कभी–कभी जब वर्षाश्रित उपराऊँ भूमिओं में धान की फसल में खर–पतवारों से यदि परेशान हो गए हों तब किसी अन्य फसल जैसे कि मक्का, अरहर, उरद, तिल इत्यादि लगा सकते हैं।

खर–पतवार नियंत्रण की रासायनिक विधियाँ–

- वर्षाश्रित उपराऊँ भूमिओं में कभी–कभी सभी विधियाँ अपनाने के बाद भी कुछ न कुछ खर– पतवार रह ही जातें हैं. उस समय रासायनिक दवाएं ही विकल्प बच जाती हैं। खेती के अति आवश्यक समय में मजदूरों की कमी एवं मानव श्रम के दरों में वृद्धि आर्थिक दृष्टि से लाभकारी नहीं रहता। वैसे में शाक नाशियों का व्यवहार किया जा सकता है (तालिका –1)
- प्रतिरोपित धान या रोपा धान (वर्षाश्रित या सिंचित)
- प्रतिरोपित धान या रोपा धान में खर दृ पतवारों की आक्रांतता वर्षाश्रित उपराऊँ भूमि की अपेक्षा कम होती है .रोपा के आरंभिक दिनों में ऐसा लगता है कि खर–पतवार आयेगें ही नहीं पर कुछ दिनों बाद वे दिखने लगते हैं। रोपा धान में उनकी प्रजातियाँ दूब ,मोथा की अलग किस्में, मकराघास, सामाघास, गुजगुजा, महकउआ, जंगलीधान, करमी, सलविनिया पिस्टिया, जंगली चौलाई, भंगरा, थुकाहा इत्यादि इत्यादि पाई जाती हैं।
- प्रतिरोपित धान या रोपा धान में खर–पतवारों का नियंत्रण पौधशाला प्रबंधन से ही की जानी चाहिए। पौधशाला की तैयारी के समय खूब अच्छी तरह जुताई करें, खर–पतवारों के अवशेषों को चुनकर नष्ट करें,बिल्कुल सड़े कम्पोस्ट का व्यवहार करें, साफ और खर–पतवार रहित बीज और पौधशाला में भी हो सके तो खर–पतवार नाशी दवा का प्रयोग करें। पौधशाला में दिखने वाले अवांछित पौधों को निकाल फेकें इत्यादि इत्यादि।
- वर्षाश्रित उपराऊँ भूमि की स्थिति में बताई गयी कुछ विधियाँ तो समान रहेंगी पर कुछ अलग होगी। इसमे रोपा या प्रतिरोपण से पहले खेत की तैयारी एवं कदवा (पडलिंग) करके खेत में पानी स्थिर करके दो–तीन दिनों के लिए छोड़ देने से बहुत से खर–पतवार सड़–गल जाते हैं। रोपा के बाद खेत में लगातार पानी लगा रहने से भी खर–पतवार कम आते हैं।

- रोपा या प्रतिरोपण के समय नत्रजन का प्रयोग बिल्कुल न करें। रोपा के 15 दिनों बाद नत्रजन की आधी मात्रा उपरिवेषित करें तथा शेष आधे को दो बार में 15–20 दिनों के अन्तराल पर दें।
- वर्षाश्रित उपराऊँ भूमि हो या नीचली भूमि या फिर सिंचित क्षेत्र, शाकनाशियों (खर– पतवार नाशियों) का प्रयोग सदैव लागत, मानवश्रम एवं समय की बचत करने में मददगार होता है पर इसका सही चयन, उचित मात्रा, उचित समय, उचित विधि इसकी कार्य क्षमता तथा लाभ को और बढ़ा देता है। इसके लिए तालिका–1 पर ध्यान दें।

खर–पतवार नाशियों के छिड़काव में बरतने वाली सावधानियां –

1. हर फसल के लिए सही दवा एवं मात्रा सुनिश्चित कर ही छिड़काव करें।
2. छिड़काव में फ्लैट फैन नोज़ल का व्यवहार करें।
3. यदि हवा तेज हो या वर्षा होने की सम्भावना हो तो वैसे में छिड़काव न करें।
4. फसल के बताये गए अवस्था में ही छिड़काव करें।
5. घुलनशील चूर्ण का घोल बनाकर छिड़काव करते समय घोल को चलाते रहें।
6. छिड़काव करते समय नाक एवं मुँह को ढककर रखें।
7. दोपहर या खूब धूप में छिड़काव न करें.शाम के वक्त छिड़काव करना अच्छा होता है।
8. छिड़काव के बाद प्रयुक्त मशीनों, उपस्करों इत्यादि को हमेशा साफ करके रखें।
9. छड़काव के बाद हाँथ–पैर को अच्छी तरह साबुन से धो लें।

तालिका –1

फसल अवस्था	शाक नाशी रसायन	दर (सक्रिय तत्व /हे .	व्यापारिक नाम	उत्पाद (मि. ली .या ग्राम /हे)	व्यवहार का उचित समय
पौधशाला	प्रेटीलाक्लोर	750 -1000 मि .ली .	रीफिट	100 मि ली प्रति 800 -1000 वर्ग मी.	4 से 5 दिनों बाद
	पाएराजों सलफ्यूरान ईथाइल	25 ग्राम	साथी	8 ग्राम प्रति 800 - 1000 वर्ग मी.	4 से 5 दिनों बाद
सीधी बुआई	पेंदिमेथालिन	1000 मि. ली.	स्टॉम्प	3333 मि. ली.	बुआई के 2 दिनों के अन्दर
	ब्युटाक्लोर	1500 मि. ली.	मैचेटी ,तीर	3000 मि.ली.	बुआई के 3-4 दिनों के बाद
	2,4 डी सोडियम लवण	800 ग्राम	वीडमार, नोकवीड, ग्रीनवीड, वीडकील	1000 ग्राम	बुआई के 20 -25 दिनों के बाद
	पाएराजों सलफ्यूरान ईथाइल	25 ग्राम	साथी	250 ग्राम	बुआई के 15 -20 दिनों के बीच
	विसपायरीबैक सोडियम	25 ग्राम	नॉमिनी गोल्ड	250 मि ली	बुआई के 15 -20 दिनों के बीच

रोपा धान	ब्युटाक्लोर	1500 मि. ली.	मैचेटी ,तीर	3000 मि.ली.	रोपा के 3-4 दिनों के बाद
	2,4 डी सोडियम लवण	800 ग्राम	वीडमार, नोकवीड, ग्रीनवीड, वीडकील	1000 ग्राम	रोपा के 20-25 दिनों के बाद
	पाएराजों सलफ्यूरान ईथाइल	25 ग्राम	साथी	250 ग्राम	रोपा के 15-20 दिनों के बीच
	विसपायरीबैक सोडियम	25 ग्राम	नॉमिनी गोल्ड	250 मि ली	रोपा के 15-20 दिनों के बीच
	प्रेटीलाक्लोर	750 मि .ली .	रीफिट	1500 मि ली.	रोपा के 3 - 5 नों के अन्दर

Policy

Peer Reviewed

Revolutionizing Agriculture: Water Shortage Solutions for New Fields and Practices

❑ **Pawan Kumar**

The globe is experiencing a water crisis, and agriculture is one of the industries most affected. The need for food and water is increasing as the world's population grows. This is causing a water deficit for agricultural uses, which has a substantial impact on food production. New fields and methods, on the other hand, are developing that are transforming agriculture and providing answers to the water crisis problem. Precision irrigation systems, vertical farming, and hydroponics are just a few of the innovative approaches that are transforming the way we grow and produce food. In this article, we'll look at some of the most successful water scarcity solutions for new agricultural areas and activities. We'll look at the advantages of each strategy and how they're used to boost crop yields while using less water.

Water shortage has emerged as a major worldwide concern, with far-reaching ramifications for agriculture, the backbone of our food systems. As the world's population grows, so does the need for food, putting an additional strain on our already scarce water resources. The United Nations estimates that unless quick action is done, worldwide water demand would exceed availability by 40% by 2030 (https://news.un.org). Agriculture is particularly vulnerable to this dilemma since it is the greatest consumer of freshwater. Crops fail to grow in the absence of an appropriate water supply, resulting in lower yields, degraded quality, and even crop losses. This not only impacts farmers' livelihoods but also concerns global food security. In the face of water constraints, traditional farming techniques that rely primarily on conventional irrigation systems are no longer viable. Inefficient irrigation technologies, such as flood irrigation, waste a lot of water, compounding the situation. The need for creative and long-term solutions has never been greater. Fortunately, technological improvements, together with rising awareness of the need for water conservation, have cleared the way for new agricultural lands and practices. Precision irrigation systems like drip irrigation, as well as hydroponics and vertical farming, are transforming the way we grow crops, assuring maximum efficiency and lowest water waste.

This article will look at some of the most promising water crisis solutions that are transforming agriculture. We will look at how cutting-edge technology and new agricultural techniques are assisting farmers in adapting to water shortage concerns, increasing production, and contributing to a more sustainable future. We set out on a trip to investigate the revolutionary potential of these water shortage solutions, as well as their critical role in ensuring our global food supply. We can modernize agriculture while also addressing the serious issue of water scarcity for a better and more sustainable future.

1. Understanding the water requirements for different crops

To survive and flourish, plant roots suck or draw water from the earth. The majority of this water does not remain in the plant and instead escapes to the atmosphere as vapour through the plant's leaves and stem. This is referred to as transpiration. Transpiration occurs primarily throughout the day. During the day, water vapour evaporates from an open water surface into the atmosphere. Water on the soil's surface behaves similarly to water on a plant's leaves and

Crop	Crop water need (mm/total growing period)
Alfalfa	800-1600
Banana	1200-2200
Barley/Oats/Wheat	450-650
Bean	300-500
Cabbage	350-500
Citrus	900-1200
Cotton	700-1300
Maize	500-800
Melon	400-600
Onion	350-550
Peanut	500-700
Pea	350-500
Pepper	600-900
Potato	500-700
Rice (paddy)	450-700
Sorghum/Millet	450-650
Soybean	450-700
Sugar beet	550-750
Sugarcane	1500-2500
Sunflower	600-1000
Tomato	400-800

Table 1 shows some indicative or estimated numbers for the complete growing season of the main field crops.

Department of Environmental Science, Babasaheb Bhimrao Ambedkar University (Central), Lucknow
Email : pawan.yaduvansii@gmail.com

stems. This is referred to as evaporation. A crop's water need is thus made up of transpiration and evaporation. As a result, crop water requirements are frequently referred to as "evapotranspiration."

A crop's water need is often represented in millimeters per day, millimeters per month, or millimeters per season. Assume a crop's water requirement in an extremely hot, dry region is 10 mm/day. This indicates that the crop requires a water layer of 10 mm over the entire region where it is planted each day. This does not imply that the 10 mm must be provided by rain or irrigation every day. It is still conceivable to give, say, 50 mm of irrigation water every 5 days. The irrigation water will subsequently be held in the root zone and consumed by the plants gradually: 10 mm each day.

A crop planted in a sunny and hot climate requires more water per day than a crop grown in an overcast and cooler one. Apart from sunlight and temperature, there are additional climatic elements that impact crop water requirements. These variables are humidity and wind speed. Crop water requirements are higher when it is dry than when it is humid. Crops require more water in windy settings than in calm climates. Crop water requirements are thus highest in places that are hot, dry, windy, and sunny. When it is chilly, humid, and gloomy, with little or no breeze, the lowest readings are obtained. It is evident from the preceding that one crop cultivated in different climatic zones would have variable water requirements. A given maize variety planted in a temperate region, for example, will use less water per day than the same maize variety produced in a hotter temperature. It is so useful to choose a specific standard crop or reference crop and assess how much water it requires per day in different climatic locations. Grass has been designated as a standard crop or reference crop. For example, in a semi-arid region with a mean temperature of 20°C, a normal grass crop requires roughly 6.5 mm of water per day. A grass crop cultivated in a sub-humid region with a mean temperature of 30°C requires around 7.5 mm of water per day.

The crop type not only influences the daily water demand of a fully developed crop, i.e. the daily peak water need, but it also influences the duration of the crop's overall growth season, and hence the seasonal water need. Data on the complete growing season of the various crops cultivated in a region are best collected locally. These data can be received from a seed source, the Extension Service, the Irrigation Department, or the Ministry of Agriculture, for example. The length of the whole growing season has a significant impact on seasonal crop water requirements.

There are numerous rice kinds, for example, some with a short growth cycle (e.g., 90 days) and others with a longer growing cycle (e.g., 150 days). This has a significant impact on seasonal rice water needs: a rice crop that is in the field for 150 days will require significantly more water than a rice crop that is only in the field for 90 days. Of course, the daily peak water need for the two rice harvests will remain the same, but the 150-day crop will require this daily amount over a longer period of time. The season in which crops are cultivated is also highly important. A crop planted during the colder months will require significantly less water than a crop grown during the hotter months.

In order to revolutionize agriculture and find effective solutions for water shortage, it is crucial to have a deep understanding of the water requirements of different crops. Not all plants have the same needs when it comes to water consumption, and tailoring irrigation practices accordingly can lead to significant water savings and improved efficiency in agricultural practices. Each crop has its own unique characteristics and growth stages that determine its water requirements. Some crops, like rice or water-intensive vegetables, require larger amounts of water throughout their growth cycle. On the other hand, crops like cacti or succulents are adapted to arid conditions and can thrive with minimal watering. By studying and analyzing the water needs of different crops, farmers and agricultural experts can develop more precise irrigation strategies. This can include techniques such as drip irrigation, which delivers water directly to the plant's root zone, minimizing wastage and evaporation. Implementing smart irrigation systems that use sensors to monitor soil moisture levels and adjust watering accordingly can also contribute to water conservation efforts.

Furthermore, understanding the water requirements of different crops can also help in selecting suitable varieties for regions with limited water availability. By choosing drought-tolerant or water-efficient crop varieties, farmers can reduce their water consumption without compromising productivity. Additionally, implementing crop rotation practices can optimize water usage. By alternating between crops with different water requirements, farmers can minimize the strain on water resources and prevent excessive depletion of soil moisture. Overall, understanding the specific water needs of different crops is a fundamental step towards revolutionizing agriculture and finding sustainable solutions to water scarcity. By adopting tailored irrigation techniques, selecting appropriate crop varieties, and implementing efficient farming practices, we can pave the way for a more water-efficient and environmentally conscious agricultural sector.

2. Implementing precision irrigation techniques for water conservation

Precise irrigation is a system that employs irrigation sensors to give crops water and nutrients (if fertigation is employed) at the right time, in the right place, and in the right amounts to promote crop growth and development. Watering crops using precision irrigation is the most efficient and cost-effective way. Traditional watering methods soak water into the soil around the fork. Because the plant draws water from a specified depth through its roots, water, a very endangered resource, is thus squandered and remains unused. Precision irrigation systems provide water directly to the roots of plants,

precisely where we want it and in the amount required by the crop. There is no water waste or land irrigation with these solutions. When we talk about irrigating plant roots, we're talking about a drip irrigation system. It is a low-cost, environmentally friendly irrigation method that offers the best savings and returns. You don't waste a drop of water this way, not even via evaporation. Drip irrigation is a unique method of delivering water directly to the plant's roots. Precision irrigation systems do more than just water plants; they nurture and preserve the earth as well as your crops. Fertigation allows for the economical administration of fertilizers in exactly defined quantities at precisely determined times when the plants require it the most for vegetation.

2.1. Advantages of Precision Irrigation

Precision irrigation is a crucial idea in precision agriculture today, with several agronomic and economic benefits:

- Precise delivery of water/nutrients to plant roots, preventing spray losses on surrounding soil and resulting in reduced weed emergence.
- Precision irrigation is suitable for all types of soil and all sizes of arable land.
- Precision irrigation systems are simple to install; they are automated and require little human intervention. Some methods of precision irrigation, when paired with AI, may cut wastewater to only 2.6%.
- The precise guiding system promotes faster growth, higher quality, and larger crop yields.
- Using automated precision irrigation systems minimizes the requirement for extra staff operations (up to four times).

2.2. Types of Precision Irrigation

The sort of irrigation system you pick is determined by various criteria, including soil type, arable land area, the quantity of precipitation in that geographical region, and water supply sources. Here are the four most common types of precision irrigation, depending on your watering needs:

2.2.1. Surface irrigation is the simplest method of irrigation used thousands of years ago. Surface guidance does not require modern advanced systems – it relies on large amounts of water and gravitational forces. Surface irrigation is often ineffective on sandy soil types and leads to excessive and inefficient water consumption (Fig. 1A).. As part of surface irrigation, we distinguish three subtypes:

2.2.1.1. Basins Irrigation The most often used technique for surface irrigation. It entails holding a lot of water in bunds close to rich soil, which farmers then utilize to flood the fields. For flat, smaller land areas with little slope, basin irrigation works well.

2.2.1.2. Furrow irrigation. Furrow irrigation is the oldest method of surface irrigation. It involves creating small furrows between fields that farmers fill with water. This method is suitable for broad-acre row crops; it's cheap and doesn't require modern technologies.

2.2.1.3. Border irrigation. Border irrigation is suitable for sloping land, ensuring even irrigation and usability of the entire land. Farmers separate fields with border ridges and fill them with irrigation water in border irrigation.

2.2.2. Sprinkler irrigation effectively replicates rainfall and is suitable for both small and large agricultural areas. Water sprays through the air as a result of the pressure, and small drops, like raindrops, fall on the ground and the crops. Water is delivered to the sprinkler through pipes. Sprinklers can be programmed to spray water forward, backward, or rotationally. It is also possible to level the amount of water discharged as well as the pressure of the water emitted. The sprayers' job is mechanized, and depending on the crop, they might work seasonally or year-round. Sprinklers, while a very effective watering technology, are not ideal for all usage for a variety of reasons (Fig. 1B)..

Figure.1. Image showing different types of irrigation. A; Surface irrigation, B; Sprinkler irrigation, C; Drip irrigation and D; Subsurface irrigation

2.2.3. Drip irrigation saves water by up to 40% - 70%, making it one of the most cost-effective irrigation technologies. A drip irrigation system delivers water straight to the plant's roots, where it should be. The surrounding soil remains dry, which slows weed development, providing a double benefit: you may save money on pesticides while preventing unwanted soil pollution. Aside from irrigation, the drip system may also be used for crop fertigation. The drip irrigation

technique consists of installing thin pipes over the full width and length of the agricultural area, from which a low-pressure system sends water drops to the disease's root. You may improve the system by including a programmer that automatically regulates the operation and the amount of water utilized. When the software finishes, the system shuts down automatically (Fig. 1C).

2.2.4. Subsurface irrigation technique is similar to drip irrigation, except that the watering is done underground. The dripper is located beneath the soil surface, and water is supplied straight to the roots. The depth of the dropper is influenced by the kind of crop and the condition of the soil. Subsurface irrigation systems can be used to apply nutrients and plant protection agents in addition to watering (Fig. 1D)..

Implementing precision irrigation techniques is crucial for addressing water shortage issues in agriculture. Traditional irrigation methods often result in excessive water usage and inefficient distribution, leading to wastage and increased costs. Precision irrigation, on the other hand, revolutionizes the way water is delivered to crops, ensuring optimal water usage and conservation. One of the key aspects of precision irrigation is the use of advanced technology and data-driven systems. Soil moisture sensors, weather stations, and remote monitoring tools enable farmers to collect real-time data on soil moisture levels, weather conditions, and crop water requirements. This data is then used to accurately determine when and how much water should be applied to each specific area, ensuring that crops receive just the right amount of water they need to thrive. By implementing precision irrigation, farmers can target the water supply directly to the plant's root zone, minimizing water loss due to evaporation or runoff. This targeted approach not only conserves water but also enhances crop health and productivity. Additionally, precision irrigation techniques such as drip irrigation or micro-sprinklers can significantly reduce water usage compared to traditional flood or overhead sprinkler systems.

Furthermore, precision irrigation allows for precise nutrient management. By delivering water directly to the plant's root zone, farmers can also apply fertilizers or nutrients precisely, ensuring that they reach the plant in the most efficient manner. This reduces the risk of nutrient leaching and runoff, further contributing to water conservation efforts while maximizing crop yields. Adopting precision irrigation techniques may require initial investments in equipment and technology. However, the long-term benefits outweigh the costs, as farmers can achieve substantial water savings, conserve resources, and improve overall sustainability. Moreover, precision irrigation contributes to the development of more efficient and environmentally friendly agricultural practices, ensuring a brighter future for both farmers and the planet.

3. Drip irrigation: A game-changer for water conservation in agriculture

Drip irrigation has emerged as a game-changer in the realm of water conservation in agriculture. This innovative technique revolutionizes the way water is delivered to plants, maximizing efficiency and minimizing waste. Unlike traditional irrigation methods that flood fields, drip irrigation precisely targets the root zone of each plant, delivering water directly to where it is needed most. The system consists of a network of tubes or pipes with strategically placed drip emitters, which slowly release water in a controlled and uniform manner. This allows for precise water application, reducing evaporation and runoff, and ensuring that every drop counts. One of the significant advantages of drip irrigation is its ability to drastically reduce water usage compared to conventional irrigation methods. By providing water directly to the plant's roots, it minimizes losses due to evaporation and surface runoff. Studies have shown that drip irrigation can reduce water consumption by up to 50% while increasing crop yields and improving overall plant health.

Furthermore, drip irrigation enables farmers to optimize water distribution, even in challenging terrain or areas with limited water resources. It can be easily combined with other water-saving techniques such as mulching, which further enhances water retention in the soil. Another advantage of drip irrigation is its versatility and scalability. It can be adapted to various crop types and sizes, from small-scale vegetable gardens to large commercial farms. Additionally, the system can be automated and controlled, allowing farmers to monitor and adjust water delivery based on specific plant needs, weather conditions, and soil moisture levels.

Aside from conserving water, drip irrigation also offers additional benefits such as reducing weed growth and minimizing the risk of diseases caused by excessive moisture on plant leaves. By keeping the foliage dry, the system creates an unfavorable environment for pathogens, leading to healthier crops and potentially reducing the need for pesticides. As water scarcity continues to pose challenges to agriculture, the adoption of drip irrigation holds tremendous potential in mitigating the impact of water shortages. Its efficient and targeted water delivery system not only conserves this precious resource but also enhances crop productivity and sustainability. By embracing this game-changing technique, farmers can pave the way for a more water-efficient and environmentally conscious future in agriculture.

4. Utilizing smart sensors and data analytics for efficient water management

In the face of growing water scarcity, the agriculture industry is in dire need of innovative solutions to mitigate the impact on crop yields and maximize water efficiency. This is where the revolutionary combination of smart sensors and data analytics comes into play. By strategically placing smart sensors throughout fields, farmers can gain real-time insights

into soil moisture levels, weather patterns, and crop water requirements(Fig.2).

4.1. Smart Irrigation Controllers

This is a potential breakthrough and a new trend in irrigation that consists of gadgets that automate watering schedules depending on crop and soil demands as well as present and forecasted weather occurrences. Smart irrigation controllers modify the watering schedules to take into consideration the frequency and duration of precipitation, temperature, humidity, and wind speed using the information gathered from weather sensors. On the other side, predictive analytics foresee upcoming weather occurrences, reducing the danger of irrigation that is either too much or too little. In comparison to traditional irrigation systems, smart irrigation controllers are extremely effective and may save up to 50% of the water required for (crop) irrigation. In addition to increasing irrigation efficiency, these technologies help minimize labor costs, boost agricultural yields, and lower energy consumption for pumping water (Xiangtian et al., 2020).

4.2. Sensors for Soil Moisture

These tools detect soil moisture levels, enabling farmers to determine the amount of water needed for crop development and to plan irrigation schedules. Farmers may apply water more precisely by using real-time data on soil moisture levels provided by soil moisture sensors. Crop growth may be negatively impacted by either overwatering or under watering. Farmers may avoid these problems by using soil moisture monitors to deliver more precise irrigation, use less water, and ultimately increase crop yields.

4.3. Systems for Micro-Irrigation

Another significant advancement and trend in the realm of water management is the growing use of micro-irrigation devices. By precisely applying water to the root zone of plants, micro-irrigation devices reduce water losses from evaporation, wind drift, and runoff. These systems may be altered to accommodate different crops, soil types, and field conditions, maximizing water use effectiveness while minimizing water usage. By facilitating better nutrient absorption and lowering plant stress, micro-irrigation devices can also increase crop yield and quality. These solutions can lessen soil erosion and help minimize the overall need for fertilizer. In locations where there is a lack of water, they are quite effective.

4.4. Using robots to irrigate crops

Robotics developments have shown potential for managing irrigation systems. Robotic systems may be used to evaluate plant health, find pests, spot sick or stressed plants, and figure out how much water each plant needs. Robotic systems may function independently, and offer farmers and water managers real-time information about the state of crops and soil, enabling prompt interventions.

4.5. Using artificial intelligence to make decisions and schedule irrigation

By improving predictive modeling and decision-making, artificial intelligence systems may offer insightful information on irrigation management. Large and complicated data sets produced by sensors like as soil moisture sensors, weather sensors, and other sensors may be analyzed by machine learning algorithms to produce suggestions for the best irrigation schedules. This technique can optimize water distribution, increase irrigation management accuracy, and decrease water waste. Artificial intelligence may be used in irrigation to improve data management, create accurate irrigation plans, use less water, and eventually raise agricultural yields.

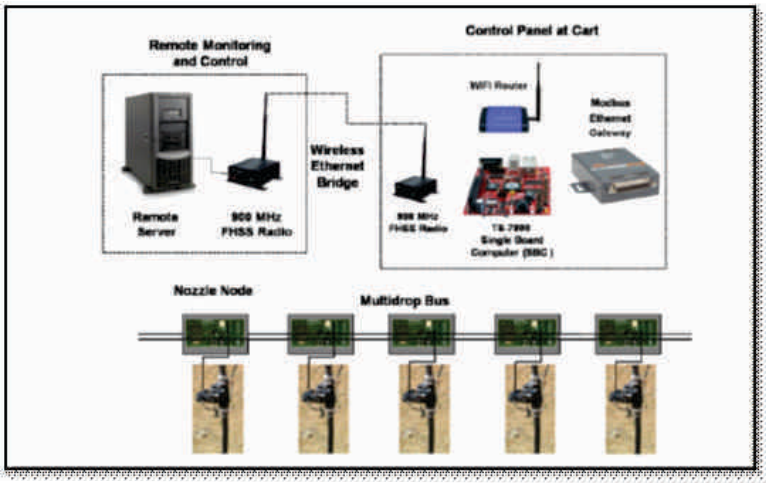

Figure 2. Image showing a Flow diagram of connectivity between smart sensor, control panel and data processor

These sensors provide accurate data that is crucial for making informed decisions regarding irrigation schedules and water management strategies. But it doesn't stop there. The real power lies in the integration of data analytics. By harnessing the power of advanced algorithms and machine learning, farmers can analyze this data to identify patterns, optimize irrigation practices, and predict water needs based on crop growth stages and environmental conditions. For instance, analytics can help identify areas of the field that require more or less water, enabling precise and targeted irrigation. This not only conserves water but also prevents overwatering, which can lead to nutrient leaching and crop disease. Additionally, data analytics can provide valuable insights into the effectiveness of irrigation systems, allowing farmers to fine-tune their infrastructure for optimal water distribution.

The benefits of utilizing smart sensors and data analytics extend beyond water conservation. By maximizing water efficiency, farmers can achieve higher crop yields and improve overall farm productivity. This technology-driven approach also minimizes the reliance on guesswork and intuition, providing farmers with evidence-based decision-making tools to navigate the complexities of water scarcity. As the agriculture industry continues to embrace technological advancements, the integration of smart sensors and data analytics represents a transformative shift towards sustainable and efficient water management practices. By revolutionizing the way water is utilized in fields, we can ensure a more resilient and productive future for agriculture, even in the face of water shortages.

5. Innovations in irrigation technology for water-efficient farming

As the world grapples with the challenge of water scarcity, the agricultural sector is in dire need of innovative solutions to ensure sustainable farming practices. One area where significant advancements have been made is in irrigation technology. Traditionally, agriculture has relied heavily on flood irrigation, a method that is notorious for its inefficiency and water wastage. However, with the advent of new technologies, farmers now have access to water-efficient irrigation systems that revolutionize the way water is utilized in the fields. One such innovation is drip irrigation, where water is delivered directly to the plant's root zone through a network of tubes or pipes with small outlets. This targeted approach ensures that water is utilized more efficiently, reducing wastage and maximizing plant health. Drip irrigation systems are not only water-efficient but also provide precise control over the amount of water delivered, allowing farmers to tailor irrigation schedules to the specific needs of each crop. Another notable advancement is the use of precision agriculture techniques in irrigation. By employing sensors, data analysis, and automated systems, farmers can monitor soil moisture levels in real-time and precisely deliver water where and when it is needed most. This data-driven approach eliminates guesswork and ensures that crops receive optimal irrigation, maximizing yield while minimizing water usage. Furthermore, innovative irrigation technologies also include the use of smart irrigation controllers and weather-based systems. These devices take into account weather patterns, evapotranspiration rates, and other environmental factors to adjust irrigation schedules automatically. By incorporating real-time weather data, farmers can avoid overwatering during periods of rainfall or reduce irrigation during times of high humidity, conserving water resources without compromising crop health.

The adoption of these water-efficient irrigation technologies is not only environmentally responsible but also financially advantageous for farmers. By reducing water consumption, farmers can lower their operational costs and increase their overall profitability. Moreover, these innovations contribute to sustainable agriculture, ensuring the long-term viability of farming practices in the face of water scarcity challenges.

6. The role of sustainable farming practices in water conservation

Sustainable farming practices play a crucial role in water conservation, especially in the face of growing water scarcity concerns. As the global population continues to rise, the demand for food and agricultural products increases, putting significant pressure on already limited water resources. In this context, adopting sustainable farming practices becomes imperative to ensure the long-term viability of agriculture while minimizing the environmental impact. One key aspect of sustainable farming is efficient water management. Traditional irrigation methods often result in substantial water wastage due to inefficient distribution systems and excessive evaporation. However, innovative techniques such as drip irrigation and precision farming have emerged as effective solutions to optimize water usage. Drip irrigation delivers water directly to the plant roots, minimizing losses to evaporation and ensuring that each plant receives an adequate amount of water. Precision farming, on the other hand, utilizes advanced technologies like sensors and data analytics to precisely monitor soil moisture levels, enabling farmers to irrigate only when necessary.

Furthermore, implementing conservation practices like cover cropping, crop rotation, and mulching can help reduce water requirements. Cover crops, such as legumes and grasses, act as natural barriers, preventing soil erosion and promoting water infiltration. Crop rotation helps break the cycle of pest and disease buildup while maintaining soil health, ultimately leading to improved water retention. Mulching, the practice of covering the soil with organic materials, helps conserve moisture by reducing evaporation and suppressing weed growth. In addition to these techniques, sustainable farmers also prioritize soil health through practices like composting, organic fertilization, and conservation tillage.

Healthy soil retains more water, reduces runoff, and enhances plant resilience, thereby minimizing the need for excessive irrigation. By focusing on building soil organic matter and fostering a diverse and balanced ecosystem, farmers can improve water infiltration rates and overall water-holding capacity, ensuring optimal water utilization. Beyond individual farm practices, sustainable farming also encompasses broader water management strategies. Collaborative efforts such as watershed management, water recycling, and rainwater harvesting can contribute significantly to water conservation in agriculture. By implementing these strategies at the community or regional level, farmers can collectively reduce water wastage, enhance water availability, and build resilience against future water shortages.

7. Exploring alternative water sources for agriculture

With the increasing global water shortage, it has become imperative for the agricultural industry to explore alternative water sources to sustain its practices. Traditional methods of relying solely on freshwater sources are no longer viable in many regions due to scarcity and environmental concerns (Reid et al., 2019). As a result, innovative solutions are being developed to revolutionize agriculture and ensure its long-term sustainability. One alternative water source that is gaining traction is treated wastewater. As wastewater treatment technologies continue to advance, treated wastewater can be a valuable resource for irrigation in agriculture. By treating wastewater to meet specific quality standards, it can be used safely and effectively in crop production. This not only helps conserve freshwater resources but also reduces the burden on wastewater treatment plants. Another promising approach is the utilization of brackish water and seawater. Through desalination technologies such as reverse osmosis, these saline water sources can be transformed into usable irrigation water. While desalination can be energy-intensive and costly, advancements in technology are making it increasingly feasible for agricultural applications. This opens up new possibilities for cultivating crops in coastal areas or regions with limited access to freshwater. Furthermore, rainwater harvesting and storage systems are being implemented to capture and store rainwater for agricultural purposes. This allows farmers to utilize rainwater during periods of drought or water scarcity. By installing collection systems and storage tanks, farmers can maximize the use of this valuable resource and reduce their reliance on conventional water sources (Susantha et al., 2022)

Additionally, precision irrigation techniques are being employed to optimize water usage in agriculture. These techniques involve using sensors, data analytics, and automated systems to deliver the right amount of water to crops based on their specific needs. By avoiding over-irrigation and minimizing water wastage, farmers can conserve water resources while maintaining crop productivity. As the need for sustainable water management in agriculture grows, it is crucial for farmers, researchers, and policymakers to explore and implement alternative water sources. By embracing these innovative approaches, we can revolutionize agriculture and ensure food security in the face of water scarcity challenges.

8. Government policies and incentives to promote water-saving practices in agriculture

Government policies and incentives play a crucial role in promoting water-saving practices in agriculture. Recognizing the pressing need to address water scarcity, governments around the world are taking proactive measures to support farmers and encourage the adoption of sustainable irrigation methods (Gru`ere et al., 202). One such policy is the implementation of water pricing mechanisms that prioritize efficient water usage. By charging higher prices for excessive water consumption, governments aim to incentivize farmers to invest in modern irrigation technologies that optimize water usage. These technologies include drip irrigation systems, precision agriculture techniques, and soil moisture sensors, among others. Additionally, governments are providing financial incentives and grants to farmers who adopt water-saving practices.

Table2. Showing incentives and subsidies provided by different country to their farmers (source; Zhang et al., 2023)

Country	Legal basis	Management departments	Pricing method	Water pricing structure	Incentives & Subsidies	Special features
				Developed countries		
The United States	Reclamation Reform Acts Central Valley Project Improvement Acts	Federal government State governments Local governments	Full water supply cost pricing	O&M[1] cost Capital cost Unreimbursed O&M cost and interest	➢ Interest-free reimbursement of project construction costs ➢ Reduced repayment obligation based on ability to pay or special circumstances	➢ Block water pricing structure ➢ Water rights trading market
France	Water Law Fishing law WFD	River Basin Committees Local Water Commissions	Full cost water pricing	**Internal costs** Fixed asset investment cost O&M cost Other management cos **External costs** Water pollution control	➢ Financial support for agricultural irrigation infrastructure	➢ Farmers' water associations ➢

				Water resources planning Water quality improvement…	➢ Family Support Fund (FSL) for farmers	Water tariff and water tax
Israel	Water Law	Water and Sewerage Authority	O&M cost water pricing	70 % of the O&M cost	➢ 30 % of the O&M cost ➢ Financial support for the water supply department	➢ Governmented ➢ Water quota system ➢ Block water pricing structure
Australia	Water Management Act	National Water Commission (NWC)	Full economic cost pricing	Capital cost O&M cost Costs associated with water planning and management	➢ Subsidies for public irrigation project	➢ Leading water market construction ➢ Extensive volume pricing
Spain	Water Law WFD	River Basin Authority (RBA) Irrigation Communities User associations	Full water supply cost pricing	Full running costs of irrigation districts and capital cost (called 'derrama')	➢ Subsidies for investment of new scheme or rehabilitation projects	➢ 'Regulation levy' and 'Water use tariff' ➢ Farmers' water associations
Italy	Land Reclamation Act WFD	'Reclamation and Irrigation Boards' (RIBs)	Full water supply cost pricing	**Flat charge** Capital cost Full-time labor cost O&M cost **Variable charge** Part-time labor cost Conveyance cost Pumping cost	➢ Subsidies for all project capital costs	➢ Consortia are responsible fo managing and maintaining these systems ➢ Variable charge must be tie to the amount of water applied
Japan		Land improvement districts (LIDs)	Area-based water pricing	Part of capital cost O&M cost Drainage fees	➢ Support for construction cost of projects	➢ Focus on recovery of LID costs, not efficiency pricing
Korea		Korea Rural Community Corporation (KRC) Irrigation Associations	Free for some projects & Full water supply cost pricing for others	Capital cost O&M cost Labor cost	➢ Subsidies for irrigation water in rice land	➢ Free water for 60% of rice lands ➢ Decrease in willingness to recover costs
				Developing Countries		
India	National Water Policy	Agency of State government	Fixed water pricing (measured by area)	Part of water supply cost	➢ Subsidies for O&M cost and project capital cost ➢ Subsidies for irrigation electricity	➢ No link between water charges and O&M cost ➢ Inconsistent management
Thailand		Agency of government	Free	Free water for irrigation	➢ Subsidies all to farmers	
South Africa		Agency of government	Full supply cost pricing	O&M cost Capital cost	➢ Subsidies for the capital cost	➢ Small farmers dominate

Mexico	Federal water law	Basin Agency Irrigation Community Water user association	O&M cost water pricing	O&M cost	➢ Subsidies for O&M cost and project capital cost	➢ Delegation of authority ➢ Market Competition
Pakistan		Local government	O&M cost water pricing	O&M cost	➢ Subsidies for O&M cost and project capital cost	➢ A nominal fee for irrigation water
Vietnam	Law on Water Resources	Agency of government	Almost free	Small part of O&M cost	➢ Subsidies all to farmers	
China	Agricultural water pricing reform related acts and regulations	Central government Local government Local water management departments	O&M cost water pricing Full water supply cost pricing	O&M cost (most regions) Full water supply cost (few regions)	➢ Subsidies for the difference between the water price and O&M cost ➢ Subsidies for electricity prices ➢ Discounts on prices	➢ Water quota system ➢ Farmers' water associations ➢ Water rights trading (local) ➢ Block water pricing structure

These incentives can take various forms, such as subsidies for the purchase of water-efficient equipment or financial assistance for the implementation of water management plans. By alleviating the financial burden associated with transitioning to sustainable agricultural practices, governments empower farmers to make environmentally conscious choices (Table 2.). Moreover, governments are also investing in research and development to advance irrigation technologies and techniques. By collaborating with agricultural experts and scientists, policymakers seek to identify innovative solutions that maximize crop yield while minimizing water consumption. This research-driven approach ensures that farmers have access to the most cutting-edge tools and knowledge to optimize their water usage.

Furthermore, governments are actively promoting awareness campaigns and educational programs to educate farmers about the benefits of water-saving practices. By organizing workshops, seminars, and training sessions, policymakers empower farmers with the necessary skills and knowledge to implement sustainable irrigation methods effectively. This holistic approach not only benefits individual farmers but also contributes to the overall water conservation efforts on a larger scale. In conclusion, government policies and incentives play a vital role in revolutionizing agriculture by promoting water-saving practices. By implementing pricing mechanisms, providing financial assistance, investing in research, and promoting awareness, governments are driving positive change in the agricultural sector. With continued collaboration between policymakers, farmers, and experts, we can strive towards a sustainable future where agriculture thrives even in the face of water scarcity.

Conclusion: Embracing water-saving solutions for a sustainable agricultural future

In conclusion, embracing water-saving solutions is crucial for ensuring a sustainable agricultural future. As the global population continues to grow and water scarcity becomes a pressing issue, it is imperative that we revolutionize our agricultural practices to mitigate the effects of water shortage. By implementing innovative technologies such as drip irrigation, precision farming, and hydroponics, farmers can significantly reduce water consumption while maintaining or even increasing crop yields. These methods allow for precise water application, targeting only the plant roots and minimizing wastage. Additionally, the use of drought-resistant crop varieties and soil moisture sensors can further optimize water usage. Furthermore, it is essential to promote water conservation awareness among farmers and provide education and support for the adoption of water-saving techniques. Government incentives and subsidies can incentivize farmers to invest in water-efficient technologies and sustainable practices. Revolutionizing agriculture to adapt to water scarcity not only helps conserve this precious resource but also enhances the resilience of farming systems. By reducing reliance on traditional irrigation methods and embracing innovative solutions, we can ensure a more sustainable and productive future for agriculture. In conclusion, it is imperative that we act now to embrace water-saving solutions for a sustainable agricultural future. The time to revolutionize our practices and protect our water resources is now. By implementing these water-saving techniques, we can not only support the growth of the agricultural sector but also

contribute to a more sustainable and resilient future for generations to come. As we conclude our article on revolutionizing agriculture with water shortage solutions, we hope you are inspired by the innovative approaches discussed. Water scarcity is a pressing issue that affects agricultural practices worldwide, but we believe that with the implementation of new technologies and practices, we can overcome this challenge. By adopting methods such as drip irrigation, hydroponics, and rainwater harvesting, farmers can optimize water usage, increase crop yield, and contribute to sustainable agriculture. Let's work together to ensure a greener and more prosperous future for our agricultural industry.

References

- https://news.un.org/en/story/2015/04/495792
- Nie, Xiangtian, Tianyu Fan, Bo Wang, Zhiyong Li, Achyut Shankar, and Adhiyaman Manickam. "Big data analytics and IoT in operation safety management in under water management." *Computer Communications* 154 (2020): 188-196.
- Wanniarachchi, Susantha, and Ranjan Sarukkalige. "A review on evapotranspiration estimation in agricultural water management: Past, present, and future." *Hydrology* 9, no. 7 (2022): 123.
- Zhang, Cheng-Yao, and Taikan Oki. "Water pricing reform for sustainable water resources management in China's agricultural sector." *Agricultural Water Management* 275 (2023): 108045.
- Water, U.N., 2020. World Water Development Report: Water and Climate Change. Houille Blanche 2020.
- Gru`ere, G., Shigemitsu, M., Crawford, S., 2020. Agriculture and water policy changes: Stocktaking and alignment with OECD and G20 recommendations.
- Reid, A. J., Carlson, A. K., Creed, I. F., Eliason, E. J., Gell, P. A., Johnson, P. T., ... & Cooke, S. J. (2019). Emerging threats and persistent conservation challenges for freshwater biodiversity. *Biological Reviews*, *94*(3), 849-873.

Technology

Peer Reviewed

Lab Grown Meat: A Low Carbon and Water Footprint Alternative

❑ **Akshita Singh, Shruti Rajkishore Kuril, Pushpa Reddy*, Nikku Yadav, Raj Kumar Khalko and Dr. Sunil Babu Gosipatala**[1]

As the global population continues to grow and dietary patterns shift towards higher protein consumption, traditional meat production faces mounting challenges. Lab-grown meat, a cutting-edge technology that allows meat to be cultivated in controlled laboratory settings, offers a promising solution. This article explores the emergence and potential of lab-grown meat as a sustainable and eco-friendly alternative. Lab-grown meat made possible through advancements in cell culture techniques, has gained regulatory approval in countries like Singapore and the USA. It represents a fundamental shift in meat production, with the potential to significantly reduce the environmental footprint associated with traditional livestock farming. Producing lab-grown meat involves cultivating muscle stem cells in bioreactors, leading to the development of muscle tissue that can be processed into various meat products. While cost remains a challenge, ongoing technological advancements aim to make lab-grown meat more affordable and accessible. One of the most compelling aspects of lab-grown meat is its positive environmental impact. It requires fewer resources, including land, water, and energy, and has the potential to mitigate deforestation, biodiversity loss, and greenhouse gas emissions. Lab-grown meat has been shown to reduce pollution and decrease water footprint significantly. Safety and health considerations also favour lab-grown meat, as it reduces the risk of pathogenic bacteria and allows for the customization of nutritional content. Despite its promise, lab-grown meat faces hurdles such as production costs, regulatory approvals, consumer acceptance, and addressing concerns within animal farming communities. However, it presents an exciting opportunity for the future of sustainable and ethical meat production.

Keywords: Lab-grown meat, Environmental footprint, Cell culture techniques, Ethical meat production

According to estimates from the United Nations (World Population Prospects,2022), the global population reached approximately 8 billion as of November 15, 2022, and it is projected to reach 9.7 billion by the year 2050. This population growth poses significant challenges to various natural resources, particularly the availability of food. In addition, the increasing prevalence of obesity and diabetes can be attributed, to a large extent, to dietary factors. To address the increasing demand for food, and balance the nutritional requirements numerous alternative approaches and healthy diets have emerged worldwide. Diets that are high in protein, low in carbohydrates, and low in calories have gained popularity among individuals. In response, the food industry, particularly the meat industry, has experienced significant advancements, one such advancement is "cultured meat." As the name says, this type of meat is grown in controlled laboratory settings, which resembles the processes used in the production of biopharmaceuticals. Most people prefer meat because of its essential nutrients/components and taste. The habit of consuming meat dates back to prehistoric times. Most of the countries are increasing the rate of global consumption of meat (Chriki &Hocquette, 2020). The meat consumption matrices reached over 328 million metric tons globally in 2021 and are expected to grow by 75% more. To meet the demand, the global livestock industry needs to grow; however, it suffers the challenges like limited land space, time to grow the livestock, water and air pollution. In addition, the excessive use of antibiotics for the growth of animals also has harmful effects on humans who consume the meat obtained from such animals. These concerns led to the emergence of an alternative for meat production "with low carbon and water footprint." The advancement of cell culture techniques gave a solution to these issues by enabling the production of meat or animal products in laboratory settings. This is an alternative, faster, sustainable source for meat/animal products with an eco-friendly impact (Sinke, P *et al*, 2023). As technology continues to develop, production costs tend to decrease, potentially making cultured meat a mainstream food source soon.

Lab-grown Meat

The idea that the meat on our plates is not from animals; instead, it is from the laboratories seems to be science fiction just a few years back, however, the advancements in cell culture techniques, made this a reality. Nowadays, meat can be produced in laboratory bioreactors, and two countries, Singapore and the USA, have approved lab-grown meat for human consumption. The idea of "cultured meat" gained prominence through the contributions of Dr. Jason Matheny in 2000 and Dr. Mark Post in 2013. Dr. Jason Matheny, promoted the development of cultured meat, through his publication (2000) and established an organization to advance research in lab-grown meat, i.e., New Harvest (Schonwald, J, 2009). The first edible

[1]Department of Biotechnology, Babasaheb Bhimrao Ambedkar University, Lucknow, U.P.
*Department of Biochemistry, Indian Academy Degree College- Autonomous, Bangalore-560043, Karnataka, India
Email: sunil_gos@yahoo.com

lab-grown meat in the form of hamburger was made from beef through the efforts of Dr. Mark Post (Ismail, I *et al*, 2020). Later on, many biotech companies and startups worked in this direction, refining the production methods, making the meat as natural as possible and making it tasty by adding plant proteins. The lab grown burgers, and chicken nuggets are already in the market. By 2030, the lab-grown meat could make up a substantial portion of the global meat supply, potentially reaching 1% (https://www.mckinsey.com/industries/agriculture/our-insights/cultivated-meat-out-of-the-lab-into-the-frying-pan). The researchers created meat by cultivating minute samples of animal cells within controlled settings. Their efforts resulted in a product that could replicate the new dimensions of tasting and experiencing chicken breast or ground beef by manipulating cell density and shaping techniques. Some of the cultured meat prototypes, for example, "Super Meat," were on sale in Tel Aviv, Israel; "Eat Just" a USA-based company selling lab-grown meat in Singapore. According to the information obtained from the Good Food Institute (GFI) and the Food and Agriculture Organization of the United Nations (FAO), lab-grown meat is a newly emerging substitute for traditional meat. It can impact natural resources like water, it significantly reduces water requirements for the production of meat compared to conventional meat and is more environmentally friendly with a lower carbon footprint as shown in Figure 1. It can shift consumer preferences, where individuals no longer prioritize expensive options like Wagyu beef, bluefin tuna, etc. It is assumed that with advancements in technology, even a small island could achieve the same level of affordability and efficiency in serving lab-grown meat dishes as a continent with vast grassy plains.

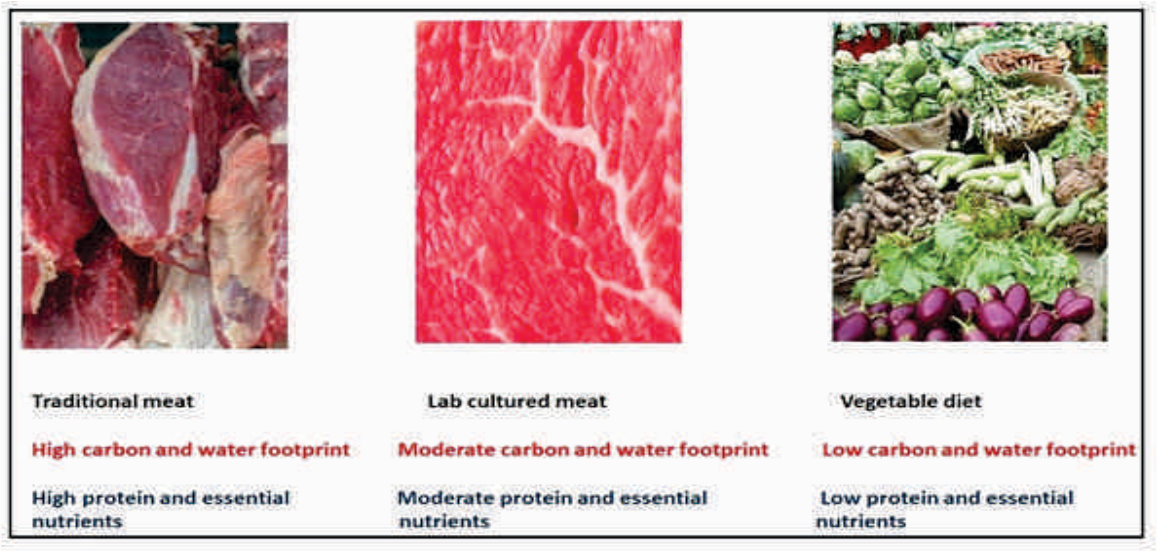

How is Lab-grown meat prepared?

Lab-grown meat is the result of years of research on stem cells and tissue engineering. Stem cells are most primitive, undifferentiated cells having unlimited proliferation capacities, found in the animals. These cell properties are exploited in making the meat in laboratories, and generally muscle "stem cells" are used for the purpose. To obtain the muscle stem cells, harmless biopsies are performed and culture them in controlled environments using bioreactors (Hocquette, J. F, 2016). The bioreactors provide sterile, warm conditions with a nutrient-rich medium required for cell growth, and these cells develop into muscle tissue. To make the muscle tissue, multiple types of cells grown on immovable scaffolds or beads coated with matrix proteins like laminin, collagen, or chitosan to create the desired texture. The bioreactors, equipped with scaffolds, make the cells grow as functional tissue; however, when cultured cells are more than 200 μm thick, oxygen and nutrients cannot penetrate the inner layer of cells, which causes those cells to die. At this point, strips of muscle are harvested from bioreactors and then processed for improving nutritional value, flavour, colour, and texture by adding ingredients, such as vitamins, iron, fat, seasonings, beet juice or heme for colour, and bread crumbs or other binding agents to hold the patties together.The protein composition of lab-grown meat primarily consists of contractile proteins, by tissue engineering, other proteins necessary for the texture, colour, and taste of the final product are expressed. For instance, myoglobin is an iron-carrying protein and is partially responsible for the pink or red colour of meat and enhances its taste; hence, myoglobin synthesis is encouraged before muscle harvest through transcriptional modulation (Faustman et al., 2020). Sometimes, lab-grown meat is produced by 3D bioprinting, where more than one cell type is positioned precisely to bring the three-dimensional functional tissue that resembles the finished meat product (Mateti, T *et al*, 2022). It is imperative that specific details of the lab-grown meat procedure can vary depending on the technology, equipment, and type of animal cells used. The overview of the lab-grown meat procedure is shown in Figure 2.

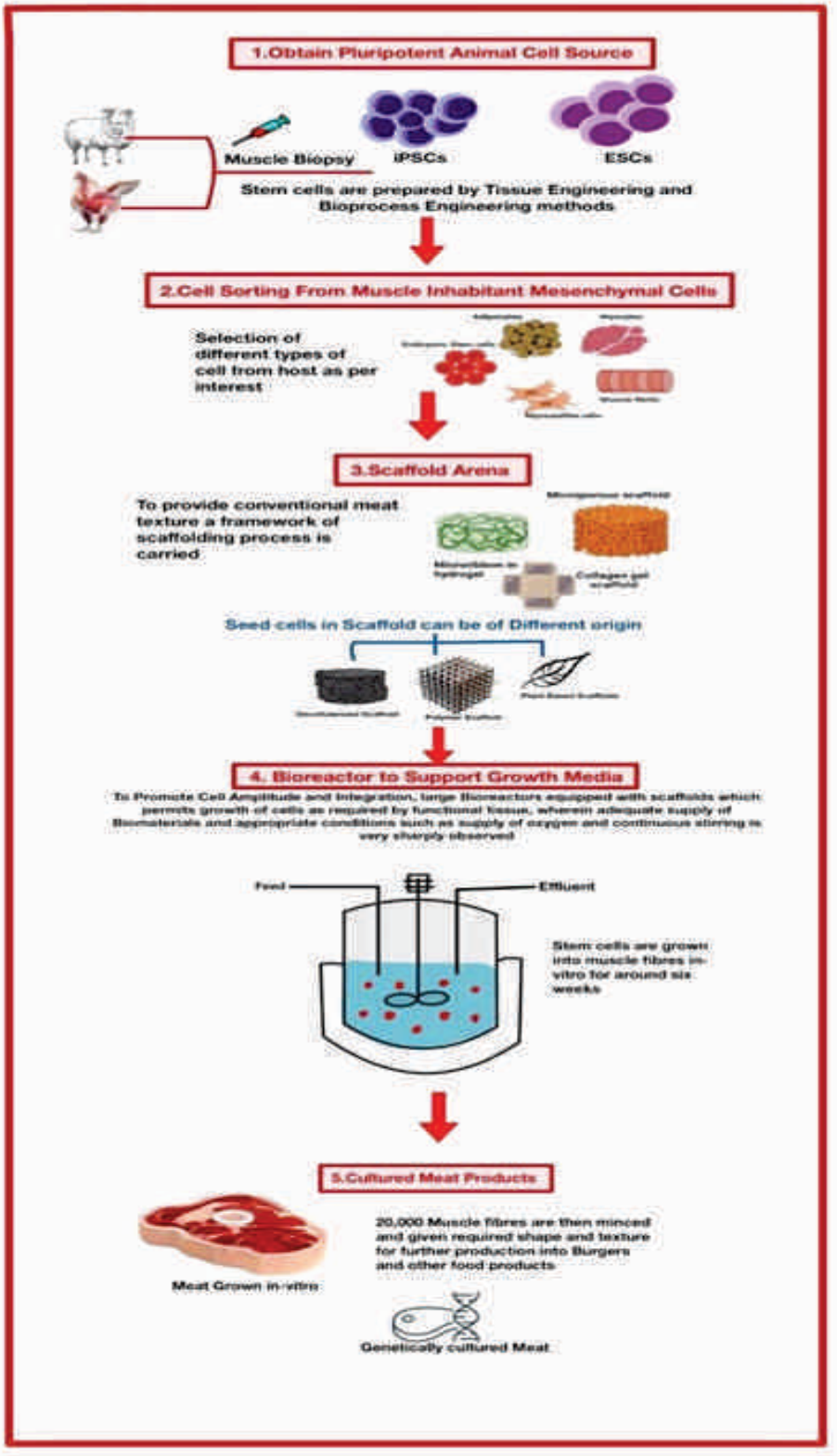

Figure 2: An overview of lab-grown meat procedure

Cost in which one could buy Cultured meat

One of the main hurdles in lab-grown meat production is its high cost of production. Many attempts are going on the technological advancements which potentially reduce the cost up to 99%. Mixing the plant-based proteins with lab-grown meat and production in large quantities significantly lowers production costs. Lab grown chicken combined with plant-based proteins is in the market (Company: Good Meat). Further, substantial investments in tens of billions of dollars are required to scale its production to even 1% of the global protein market. The upcoming decade is expected to primarily focus on demonstrating commercial viability and achieving modest market penetration

Impact on the Environment

Lab-grown meat could reduce the pressure on natural ecosystems and wildlife habitats, potentially leading to the restoration of biodiversity. This innovative approach is more efficient in decreasing deforestation, ecosystem degradation, mitigating greenhouse gas emissions, water pollution and land conversions. The metrics show that it reduces pollution by 93%, decreases water footprint by 78%, and if produced using renewable energy, it can result in 92% lower greenhouse gas emissions and up to 95% reduced land usage (Centre for Energy and Environmental Studies, Delft). Since it is produced in indoors, the external unfavourable conditions may not effect. For example, its lessens the risks of emerging infectious diseases principally associated with the storage, production, and consumption of animal products. Nevertheless, it is important to acknowledge that cultivated meat requires more energy to achieve a lower carbon footprint than conventional meat, it is crucial to incorporate renewable energy sources throughout the production process, including the supply chain, particularly for the production of necessary nutrients and other ingredients used in the culture medium. The companies involved in the lab-grown meat recognize the point, and it is imperative to integrate sustainable energy practices into their production methods. The Australian bioethicists give it a "double thumbs up" saying, "lab-grown meat stops cruelty to animals, better for the environment, safer, more efficient and healthier."

Is the lab-grown meat safe and healthy?

Lab-grown meat offers several advantages when it comes to safety and nutrition. Conventionally sourced meat can have pathogenic bacteria and viruses like *E. coli* and *Salmonella*, which can cause serious diseases in humans, while lab-cultured meat significantly reduces the risk of these diseases (Chriki & Hocquette, 2020). In addition, lab-grown meat produced with specific nutritional contents like protein and minerals essential for a healthy metabolism. Many companies have the authenticity to alter the product's nutritional profile, making a lower-fat and high protein steak through various recombinant technologies. It could also be a boon to public health by eliminating the need for factory-farmed animals and skipping the crowded and unhygienic agricultural operations that facilitate the spread of diseases.

Challenges:

Despite the potential benefits, lab-grown meat faces several challenges that must be overcome before it becomes a widely available and affordable product. The main scientific and engineering challenges the cultured meat industry faces is finding the best starter cells, mixing up a good "feed" to help them grow and finessing the logistics of manufacturing.

- **Production cost:** The 1st hamburger produced is the result of 2 years' hard work and costs about US $325,000. The ingredients such as the medium, serum used in the production of lab grown meat are expensive. In addition maintenance of sterile conditions also adds production cost. The advancements in tissue engineering, production/manufacturing methods gives hope in lowering the production costs. Many companies working on wide variety of cells that can grow on different speeds or densities, and produce different textures or nutrient profiles. Some companies are working on the development of "immortal" cell lines, the Israeli firm Believer Meats reported the production of immortal chicken fibroblast cells (Pasitka et al 2023). These things not only cut short the production cost but also enhance human consumption's acceptability, thereby making lab grown meat a sustainable product.
- **High energy demand:** Production of lab-grown meat requires large bioreactors (around 200,000L), which consume significant amounts of energy. However, many companies are working on the use of renewable energy sources and alternative sources of energy.
- **Lab grown meat as Natural meat:** Bringing the natural texure and savour taste to the lab grown meat so challenging as cells are cultured in vessels not as tissues. The meat flavors vary from one species to another, even in gender, age and farming conditions. Even within the same animal, even meat choices (muscle) depend on specific animal parts. So, a lot of consumer needs must be considered while preparing the cultured meat (Chriki & Hocquette, 2020). To achieve this few companies are trying to pair cultured meat with vegetable proteins and are trying to bring different flavors and textures.
- **Regulatory approvals**: Countries around the world follow strict regulatory frameworks. There are still concerns about how the technology will be regulated and approved for human consumption.
- **Acceptance**: Consumer acceptance of lab-grown meat is still uncertain, some may be hesitant to eat as they have

produced artificially in a laboratory and has concerns about safety, taste, and texture.

- **Religious beliefs:** Navigating through the religious sentiments can be a delicate matter that can trigger debate, especially regarding specific guidelines and practices surrounding animal slaughter and meat preparation in certain faiths.
- **Impact on animal farming communities:** Lab-grown meat has the potential to disrupt traditional animal farming practices, which can have implications on those people who depend on animal farming for livelihood. Engaging with and addressing the concerns of farming communities is essential in ensuring a smooth transition to lab-grown meat.

Lab-Grown Meat in Indian Scenario

The research area of culturing meat is still in its infancy in India. However, initial production attempts have already begun, paving the way for the anticipated availability of cultured meat products by 2025. India's first lab-grown meat company, "Clean Meat," established its laboratory at Jawaharlal Nehru University, New Delhi, and focuses on developing safe and harmless meat production methods (Srutee R *et al*, 2022). In addition, many prominent organizations are working on this emerging industry. The Centre for Cellular and Molecular Biology (CCMB), has teamed up with the National Research Centre on Meat (NRCM) to produce "Ahimsa Meat." By leveraging cellular and molecular biology techniques, they aim to revolutionize the meat production process, providing consumers with a more ethical and sustainable meat option (Srutee R *et al*, 2022).The Humane Society International India (HIS, India) partnered with Good Food Institute (GFI) and CCMB to work on the production and promotion of lab-grown meat in India. They raise awareness about the benefits of clean meat and work towards establishing it as a viable and environmentally friendly alternative to conventional meat. Further, the state of Maharashtra and the Good Food Institute (USA) signed a memorandum of understanding in February 2019, for a strategic alliance to ensure a conducive environment for the cultivation of lab-grown meat to progress and thrive within the region (Srutee R et al, 2022; https://www.pashudhanpraharee.com/plant-based-and-lab-grown-meat-startup-an-indian-opportunity/). As India's cultured meat industry continues to evolve, these collaborative efforts and research initiatives hold promise for a future where sustainable and ethical meat production can help meet the growing demand for animal protein while minimizing environmental impact and animal suffering.

Conclusion

As concerns over global food security grow, the environmental impact of conventional meat production becomes more evident, and slaughter-free alternatives are emerging as a promising solution for the future of food. Lab-grown meat exemplifies the cutting-edge field of tissue regeneration and engineering, representing a remarkable and comprehensive advancement in biotechnology. This innovative approach has the potential to address various aspects, including environmental sustainability, ethical considerations, and nutritional needs, serving as a viable substitute for traditional meat. Produced within sterile environments, it reduces the risk of contamination from diseases and chemicals. It impacts food security, the environment, and human health by reinventing a food system that will satisfy the requirements of meat products across the world in an ethical manner while keeping the environmental hazards in check. One of the conflicted aspects of this approach is the sustainability of animal farmers. It can't replace animal farming completely and offers opportunities to collaborate with animal farmers with culture labs. In addition, plant-based lab-grown meat (Ismail, I *et al*, 2020) may address the concern of religious people addressing environmental pollution and meet the food demand. This novel food's success and/or acceptability depend on its flavour and affordability. Lab-cultured meat has overcome several obstacles and is now commercially available as a secure, healthier protein with an enticing taste and aroma (similar to farmed meat). Low carbon emissions and low water usage address problems like global warming by lowering the GHG emissions of the entire food system. Therefore, substituting lab-cultured meat for farmed meat could benefit everyone, including vegetarians and meat eaters, and provide a solution to future global issues like food scarcity or other environmental. Although lab-grown meat has its benefits and drawbacks, the limitation of farmed meat can be an alternative meat source in the future.

Bibliography

1. United Nations Department of Economic and Social Affairs, Population Division. (2022). World Population Prospects 2022: Summary of Results. UN DESA/POP/2022/TR/NO. 3.
2. Chriki, S., & Hocquette, J. F. (2020). The myth of cultured meat: a review. Front Nutr. 2020; 7: 7.
3. Sinke, P., Swartz, E., Sanctorum, H., van der Giesen, C., & Odegard, I. (2023). Ex-ante life cycle assessment of commercial-scale cultivated meat production in 2030. The International Journal of Life Cycle Assessment, 28(3), 234-254.
4. Schonwald, J. (2009). Future fillet. University of Chicago Magazine, 101(5), 28-31.
5. Ismail, I., Hwang, Y. H., & Joo, S. T. (2020). Meat analog as future food: A review. Journal of animal science and

technology, 62(2), 111.

6. https://www.mckinsey.com/industries/agriculture/our-insights/cultivated-meat-out-of-the-lab-into-the-frying-pan
7. Hocquette, J. F. (2016). Is in vitro meat the solution for the future? Meat science, 120, 167-176.
8. Faustman, C., Hamernik, D., Looper, M., & Zinn, S. A. (2020). Cell-based meat: the need to assess holistically. Journal of Animal Science, 98(8), skaa177. https://doi.org/10.1093/jas/skaa177
9. Mateti, T., Laha, A., & Shenoy, P. (2022). Artificial meat industry: Production methodology, challenges, and future. JOM, 74(9), 3428-3444.
10. Pasitka, L., Cohen, M., Ehrlich, A., Gildor, B., Reuveni, E., Ayyash, M., ... & Nahmias, Y. (2023). Spontaneous immortalization of chicken fibroblasts generates stable, high-yield cell lines for serum-free production of cultured meat. Nature Food, 4(1), 35-50.
11. Srutee, R., Sowmya, R. S., & Annapure, U. S. (2022). Clean meat: techniques for meat production and its upcoming challenges. Animal Biotechnology, 33(7), 1721-1729.
12. https://www.pashudhanpraharee.com/plant-based-and-lab-grown-meat-startup-an-indian-opportunity/

Technology

Peer Reviewed

Artificial Intelligence's Impact on Agriculture and Education: A Transformative journey

❑ **Prof. R.S. Sengar[1] and Kartikey Sengar[2]**

In recent years, the convergence of technology and innovation has sparked a wave of transformation across various industries. Two sectors that have experienced significant disruption are agriculture and education. Both sectors play vital roles in shaping society, and their evolution is important for sustainable development and progress. Now, at the forefront of this transformative journey lies the powerful force of artificial intelligence (AI). By using the potential of AI, agriculture and education are undergoing profound changes, revolutionizing traditional practices, and paving the way for a more efficient and intelligent future.

Artificial intelligence, often referred to as AI, encompasses a broad range of technologies that enable machines to simulate human intelligence and perform tasks with remarkable precision and speed. From data analysis and pattern recognition to complex decision-making, AI has proven its immense value across various domains. In the agriculture sector, AI is empowering farmers with advanced tools to optimize crop yield, monitor soil conditions, and manage resources more efficiently. Likewise, in education, AI is revolutionizing the way students learn, adapt, and engage with educational content, tailoring personalized experiences and promoting lifelong learning.

Scope

The scope of transforming the agriculture and education sectors through artificial intelligence (AI) is vast and holds immense potential for positive change. Here are some key areas within each sector where AI can make a significant impact:

In Agriculture:

- **Precision farming:** AI enables farmers to gather and analyse data from various sources, including satellite imagery, drones, and IoT devices. This data-driven approach helps optimize crop management, irrigation, and fertilization, leading to higher yields and reduced resource waste.
- **Crop disease detection and management**: AI algorithms can analyse images and sensor data to identify early signs of crop diseases, enabling prompt intervention and minimizing crop losses. AI-powered systems can provide real-time recommendations for disease management and treatment.
- **Climate and weather prediction:** AI models can process vast amounts of climate and weather data to provide accurate predictions. This information aids farmers in making informed decisions regarding planting, harvesting, and managing climate-related risks.
- **Supply chain optimization:** AI can enhance the efficiency of the agricultural supply chain by optimizing logistics, inventory management, and forecasting demand. This reduces wastage, improves distribution, and ensures timely delivery of agricultural products.
- **Soil Health Monitoring –** Deep learning applications are used to identify potential defects and nutrient deficiencies in the soil. The algorithms analyse the soil samples and correlate foliage patterns with certain soil defects, plant pests and diseases.
- **Agricultural Robot Applications:** Agricultural robots automate slow, repetitive and dull tasks for farmers, allowing them to focus more on improving overall production yields. Some of the most common robots in agriculture are used for:
    - Harvesting and picking.
    - Weed control.
    - Autonomous mowing, pruning, seeding, spraying and thinning.
    - Phenotyping.
    - Sorting and packing.
    - Utility platforms.

[1]Director Training Placement and Head, Division of Plant Biotechnology, Sardar Vallabhbhai Patel University of Agriculture and Technology, Meerut-250110.
[2]Engineer and Software Developer, JSS Academy of Technical Education, Noida-201301.

Harvesting and picking is one of the most popular robotic applications in agriculture due to the accuracy and speed that robots can achieve to improve the size of yields and reduce waste from crops being left in the field.

In Education:

- **Personalized learning:** AI-powered systems can adapt educational content and curriculum based on individual student needs, learning styles, and progress. This personalized approach enhances engagement, comprehension, and student outcomes.
- **Intelligent tutoring:** AI can act as virtual tutors, providing personalized guidance and support to students. These systems can assess learning gaps, offer tailored explanations, and recommend appropriate learning resources.
- **Automated grading and feedback:** AI algorithms can automate grading processes, reducing the time and effort required by educators. AI-powered feedback systems can provide detailed assessments, enabling students to understand their strengths and areas for improvement.
- **Learning analytics:** AI can analyse vast amounts of educational data, including student performance, engagement patterns, and learning behaviours. This data-driven approach helps identify trends, optimize curriculum design, and inform evidence-based decision-making in education.
- **AI-Based Proctoring:** With the rise of online and remote learning, ensuring academic integrity during assessments has become a significant concern. Although there are tools and mechanisms to do this, AI-based proctoring can help make monitoring even more efficient and scalable for online exams.
- **24/7 Assistance Using Conversational AI**: One of the remarkable ways AI is transforming education in smart classrooms is by providing 24/7 assistance using conversational AI. In traditional classrooms, students typically rely on limited teacher interaction during class hours. However, with the integration of conversational AI, students now have access to continuous support and guidance anytime and anywhere.

The scope of transforming agriculture and education through AI extends beyond these examples. Additionally, addressing ethical considerations, data privacy, and ensuring equitable access to AI-driven solutions are essential aspects within the scope of this transformation.

As AI continues to advance, the potential for transforming agriculture and education is vast, promising increased productivity, sustainability, and improved learning outcomes. Embracing AI technologies within a responsible and ethical framework has the potential to revolutionize these sectors, benefiting farmers, educators, students, and society.

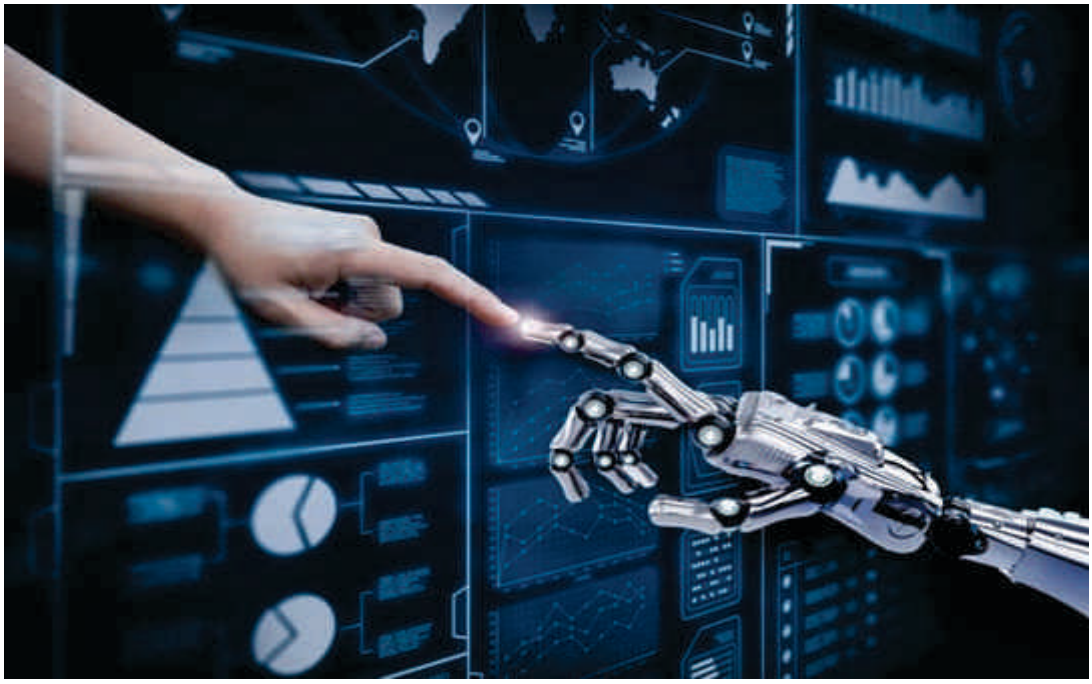

AI's impact on Agriculture and Education jobs

Artificial Intelligence (AI) is transforming the agriculture industry by providing more efficient ways to produce, harvest and sell essential crops. AI implementation emphasizes checking defective crops and improving the potential for healthy crop production. The best part of implementing AI in agriculture is that it would not eliminate the jobs of human farmers rather it will improve their processes.

In the education sector, AI is changing the way we learn. It is believed that as learning behaviour changes, robotic teachers will work at their own pace. Unlike humans, they are unlikely to make a mistake or be late for work. They only need to receive the right instructions and act accordingly. However, many jobs in the education sector are at risk.

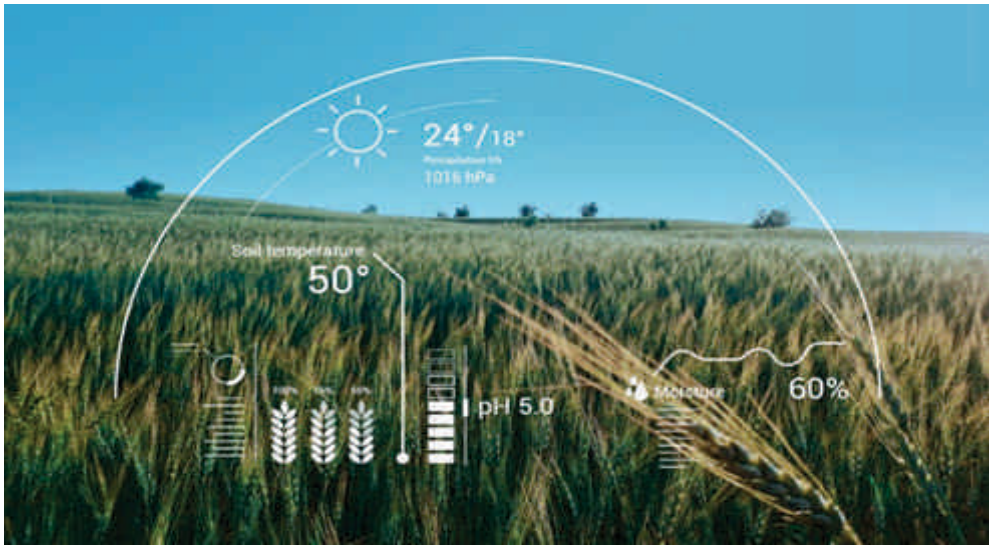

Challenges in Harnessing Artificial Intelligence for Transforming Agriculture and Education Sectors

- **Data Availability and Quality:** AI systems rely heavily on large volumes of high-quality data to train and operate effectively. However, in agriculture and education, accessing comprehensive and reliable datasets can be a challenge. In agriculture, data collection may be limited due to remote locations, lack of connectivity, or inadequate data infrastructure. Similarly, in education, obtaining standardized and comprehensive educational data can be difficult, particularly in resource-constrained settings. Ensuring the availability and quality of data is crucial for AI applications to deliver accurate and meaningful insights.
- **Human-AI Collaboration and Trust:** Successful integration of AI in agriculture and education requires a balance between human expertise and AI capabilities. Building trust and acceptance among farmers, educators, and stakeholders is essential. Some may feel uncertain about relying on AI systems for decision-making or fear job displacement. Establishing effective human-AI collaboration frameworks, providing training and support, and emphasizing the augmenting role of AI can help overcome these challenges and foster trust in the technology.
- **Infrastructure and Accessibility:** Implementing AI technologies in agriculture and education requires adequate infrastructure and accessibility. In rural or underserved areas, limited access to reliable internet connectivity and technological resources may hinder the widespread adoption of AI solutions. It is important to address the digital divide, ensure equitable access to AI tools and resources, and develop strategies to overcome infrastructure limitations.
- **Privacy and Security:** The use of AI involves collecting and analysing large amounts of data, raising concerns about privacy and data security. In agriculture, data related to farmers' practices, land holdings, and production can be sensitive. Similarly, in education, student data privacy is of utmost importance. Establishing robust data protection measures, complying with relevant regulations, and implementing secure systems to safeguard data are critical to address privacy and security challenges.
- **Skill Development and Workforce Transition:** The integration of AI technologies in agriculture and education requires a workforce with the necessary skills to leverage and manage these technologies effectively. Upskilling farmers, educators, and stakeholders to understand and utilize AI tools and techniques is essential. It is crucial to invest in training programs, capacity building initiatives, and support mechanisms to ensure a smooth transition and enable individuals to adapt to the changing technological landscape.

Addressing these challenges will be crucial for the successful and responsible transformation of the agriculture and education sectors through AI. By proactively considering these factors and implementing appropriate strategies, it is possible to maximize the benefits of AI while reducing potential risks and ensuring sustainable outcomes.

In conclusion, the transformative power of artificial intelligence (AI) in the agriculture and education sectors is undeniable. AI technologies are revolutionizing traditional practices, unlocking new possibilities, and addressing long-standing challenges. By harnessing the potential of AI, we can create more efficient, sustainable, and equitable agricultural and educational systems.

Through personalized learning, intelligent tutoring, and data analytics, AI is reshaping the way we educate and empower learners. It offers tailored experiences, enhances student engagement, and provides educators with valuable insights for evidence-based decision-making. The automation of administrative tasks frees up time and resources, allowing educators to focus on facilitating learning and fostering critical thinking skills.

In the agriculture sector, AI-driven precision farming techniques optimize resource allocation, improve crop yield, and promote environmental sustainability. AI's capabilities in crop monitoring, disease detection, and predictive analytics enable farmers to make informed decisions, reduce losses, and minimize environmental impact. The optimization of the agricultural supply chain through AI enhances productivity, reduces waste, and ensures timely delivery of products.

However, this transformative journey also comes with challenges. Ensuring access to high-quality data, addressing ethical considerations, building trust in AI systems, and bridging infrastructure gaps are essential steps in realizing the full potential of AI in agriculture and education. Skill development, workforce transition, and maintaining a human-centric approach to AI integration are crucial for a successful transformation. Collaboration among stakeholders, policymakers, educators, farmers, and technologists is essential for responsible AI adoption.

By embracing AI technologies responsibly, we can foster innovation, improve productivity, and create more equitable and sustainable agricultural and educational systems. The transformation brought about by AI is not merely a disruption, but an opportunity to reimagine and shape the future of agriculture and education for the betterment of society.

Health

Peer Reviewed

Smartphone: A Reason of Many Health Problems

❑ Dr. Diksha Gautam

"SMARTPHONE" when the word enters in our ear the brain automatically hits some thoughts related to our smartphone, an immediate response of brain gives us an indication & it arises a desire to check the smartphone as soon as possible. 'What & how much notifications are there? we want to know first, our emotion & hormones drive by this feeling.

As everyone want to take full advantage & use of technology if he/she has & if it is interesting then no one can keep themselves away and disconnected from this small gadget. We often listen in television and read in newspaper about the psychological problems associated with smartphone. But do you know various postural problems are also associated with excessive smartphone. But today I will inform you about both the problems i.e. Postural problems and Psychological problems associated with longer smartphone usage. So first of all psychological problems:

1. Smartphone addiction
2. Nomo phobia (No Mobile Phone Phobia)
3. Sleep disorders
4. Sleep-text disorder
5. Cyber sickness
6. Selfitis
7. Phantom Vibration Syndrome

Figure 1- Smartphone addiction

1. **Smartphone addiction:** "When you use a smartphone even when you know that you should not use it or when you make excuses for its usefulness." Smartphone addictive behaviour can include an intense focus on the smartphone or a specific application, for example, checking, posting, or interacting on social media platforms. If the smartphone or application will be removed from the addicted person, panic attacks or feelings of discomfort emerge.
2. **Nomo phobia (No Mobile Phone Phobia):** Nomo phobia is the fear of being out of mobile phone contact. It is; however, arguable that the word "phobia" is misused and that in the majority of cases it is only a normal anxiety.Nomo phobia is considered a disorder of the contemporary digital and virtual society and refers to discomfort, anxiety, nervousness or extreme distress caused by being out of contact with a mobile phone.

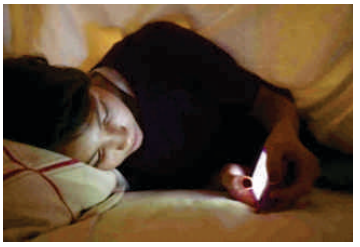

Figure 2- Sleep Disosrder

3. **Sleep disorders:** If you like to use your phone or browse on your laptop before bed, the bright blue light from the screen may be stopping your body from producing sleep regulating hormone melatonin and promoting insomnia. Melatonin is a hormone which is essential to restful sleep, and is naturally produced as the day becomes darker.

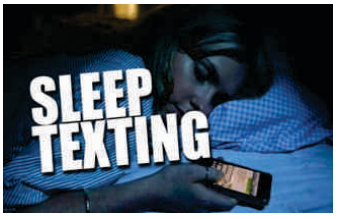

Figure 3- Sleep Texting

Figure 4- Cyber Sickness

4. **Sleep-text disorder:** *"Sleep texting is a growing phenomenon in which people (usually adolescents and young adults) send text messages while asleep."* When you send a text to someone while you're sleepy, awoken from sleep, or just not paying attention, and it makes absolutely no sense.
5. **Cyber sickness:** Cyber sickness is a new term coined for the modern day version of motion sickness that is mostly found among the smartphone users. It is a side effect of the 3D features of iPhones and iPads. Cyber sickness is caused by a disagreement between a

Assistant Professor, Department of Family Resource Management & Consumer Sciences, College of Community Science, Banda University of Agriculture & Technology, Banda-220001
Email : shiatsdiksha@gmail.com

person's eyes and the movement perceived by their balance system. It happens when the brain is tricked into believing that they are moving while they actually not.

6. **Selfitis:** It is defined as "the obsessive compulsive desire to take photos of one's self and post them on social media as a way to make up for the lack of self-esteem and to fill a gap in intimacy."The disorder has three levels:
   - **Borderline Selfitis:** taking photos of one's self at least three times a day but not posting them on social media.
   - **Acute Selfitis:** taking photos of one's self at least three times a day and posting each of the photos on social media.
   - **Chronic Selfitis:** Uncontrollable urge to take photos of one's self round the clock and posting the photos on social media more than six times a day.

Figure 5- Selfitis

7. **Phantom Vibration Syndrome:** Phantom vibration syndrome or phantom ringing is the perception that one's mobile phone is vibrating or ringing when it is not. The increasing usage of cell phones has lead some individuals to experience a phenomenon known as "phantom vibration syndrome." The syndrome known as "phantom vibration" is characterized by an individual *falsely perceiving that their cell phone is either vibrating or ringing at a time when it clearly isn't*. Those that experience PVS may be engaging in an activity away from their cell phone, yet believe that it's ringing.

Figure 6- Phantom Vibration Syndrome

Now the time for postural problems:

1. Text Neck Syndrome
2. Texting Thumb (De Quervain's syndrome)
3. Carpal Tunnel Syndrome (CTS)
4. Cubital Tunnel Syndrome
5. Thumb arthritis
6. Smartphone Pinky

1. **Text Neck Syndrome:** "It is a overuse syndrome involving the head, neck and shoulders, usually resulting from excessive strain on the spine from looking in a forward and downward position at any hand held mobile device, i.e., mobile phone/smartphone, video game unit, computer, e-reader." A term *'text neck'* is coined by US chiropractor Dr Dean L. Fishman. It refers to overuse syndrome or a repetitive stress injury, where you have your head hung forward and down looking at your mobile electronic device for extended periods of time.

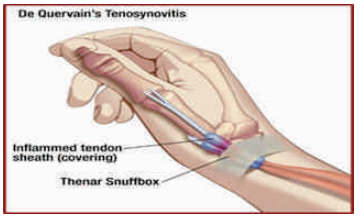

Figure 7- Texting Thumb

2. **Texting Thumb:**Texting Thumb is technically known as De Quervain's syndrome. It is a repetitive stress injury that affects the thumb and wrist. It can be a form of tendonitis, tenosynovitis or a combination of both of those disorders. It decreases grip strength or range of motion.

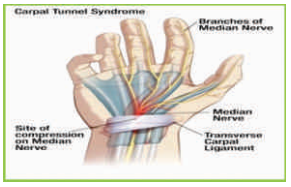

Figure 8- Carpal Tunnel Syndrome

3. **Carpal Tunnel Syndrome:** Carpal Tunnel Syndrome is the pressure on the median nerve – the nerve in the wrist that supplies feeling and movement to the parts of the hands. It can lead to numbness, tingling, weakness or muscle damage in the hands and fingers.

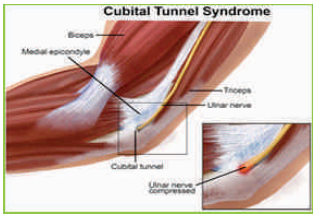

Figure 9- Cubital Tunnel Syndrome

4. **Cubital Tunnel Syndrome**: Cubital Tunnel Syndrome also known as ulnar neuropathy is caused by increased pressure on the ulnar nerve, which passes close to the skin's surface in the area of the elbow. It can cause severe pain, numbness, tingling, and muscle weakness in the hands and arms.

Figure 10- Thumb Arthritis

5. **Thumb Arthritis:** Arthritis of the carpometacarpal joint, where the thumb connects to the wrist. It causes severe joint pain in the fingers, wrists, elbows, shoulders, neck, or back.

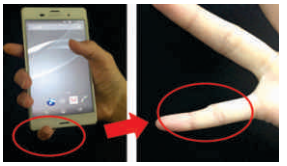

Figure 11- Smart phone Pinky

6. **Smartphone pinky:** Smartphone pinkyis the result of using your little finger to support the weight of your

phone. When you hold a heavy smartphone in your hand, it rests and presses on the inside of your end pinky joint, a susceptible spot for pain to develop.

Now you are surprised after knowing these problems and it is obvious to be surprised because we glued on our smartphone and never think about the consequences. Some people may be aware about some of these but never bother to do any changes in their daily smartphone usage. But it is necessary to give attention if your body gives you signals because our smartphone has limitless positive usage but negative aspects act as sweet poison that affect body slowly and the effects can be seen after some years later. If we have to be healthy with the use of most demanding technology i.e. Smartphone, we have to keep in mind only some preventive tips that will keep away from such type of bodily problems in future.

- First suggestion from the doctors and researchers is to use minimum your smartphone.
- Take Frequent Breaks while smartphone use.
- Hold Mobile devices at eye level so that neck will not strain.
- Stop overuse of your smart devices and limit the time you spend on your tablets and smart phones.
- Use an alarm and keep your phone out of your bedroom.
- Take sufficient (8 hours) sleep at night.
- Read a paper or book.
- Remind yourself the email, text, or post is not urgent.
- Don't be multitasking means do not do other activities with smartphone like eating and using smartphone.
- Spent time with nature at least daily.
- Put your phone away at dinner, movies and when out with friends.

"Be Smart With Your Smartphone"

Report

Innovation Journey 2023

❑ **Courtesy : People's World Commission on Drought and Flood (PWCDF)**

Drought-Flood Treatment Innovation Journey to find the solution ended at People's World Commission on Drought and Flood's office in Urlika, Sweden.

Location-Urlika, Sweden

On August 26, 2023, the Drought-Flood World Innovation Tour was held at the office of the People's World Commission on Drought and Flood in Urlika, Sweden. A meeting was held here at the office of People's World Commission on Drought and Flood. The process of People's World Commission on Drought and Flood started on 26 August 2022 itself and the innovation journey was discussed. Today, after completing one year of the innovation journey, it was concluded in Urlika, Sweden. You know that the innovation journey started in the village Gopalpura, district of Alwar Rajasthan. Because the work that has been done in Gopalpur village in the last 4 decades has brought back the people who were devastated by drought and flood. After coming back, they have established their natural prosperity. This is a great example to understand the technique of flood-drought treatment. That is why the journey started from Gopalpura village. In this journey, chapters were consecutively added one by one. Here in Sweden, Urlika, the first phase of the innovation journey has come to an end, today. In today's meeting, a discussion on the experience and conclusion of the dialogue of the innovation journey also started.

The conclusion is that, flood-drought is unfortunately increasing in the world today. The main reason for this is that the human relationship with nature has been broken in our current daily life. Now, human education technology and engineering only teach the exploitation of nature. Due to the exploitation of nature, the relationship of love with the forest, soil, and nature has deteriorated. Due to this, the density of forests is continuously decreasing. The roads leading to the free flow of the rivers have been blocked as well. Meantime, the encroaching and polluting activities on natural routes have increased. The erosion of soil due to the problems mentioned above is becoming more common in the water-affected area because the rainwater comes rapidly and sweeps and brings the soil into the rivers, which results in the undesirable increase in the bed of the rivers. The variation in the cycle of rain also causes an increase in the flood-drought. Due to this, we are observing that suffering and crisis have arisen in the lives of human's day by day. It is very dangerous not only for human health but also for whole livings in the world and also has a frightening potential to trigger the World War III.

The programs that took place after the formation of the commission in the year 2022-2023, have also been accepted by the United Nations. By studying the work of Tarun Bharat Sangh, the general report was published. Therefore, as mentioned earlier, the journey started from Gopalpur village which was devastated and subsequently displaced due to the drought. Then, villagers retained water themselves by rejuvenating the water to conserve their prosperous village. There cannot be a lesson for the whole world from such prosperity of the village because the world is a world of diverse geo-cultural diversities. Biodiversity includes the diverse effects of climate change and the relationship of climate to agriculture. In all these variations there are droughts and floods everywhere. But in the areas where there is flood-drought, their malpractices are beginning to be faced in the near future, unfortunately.

Where the land is bare, there are more side effects of drought and flood. Due to the earth being bare, when there is no spongy action of greenery between the earth and the sun from the sun's rays, then it creates heat and spoils it. That's why greenery is the only way to get rid of drought and flooding, which forced the people to increase greenery. The Society also needs to understand that the countries which have increased greenery on their land – like Sweden, when the first Earth Summit took place in 1972, had only half as many forests as today. They have doubled the forest on their land in the last 50 years. The countries which have increased their greenery, along with not only the health of the society, the health of the

earth, and the health of humans but also the health of water have also improved.

It has been very clearly understood from this innovation journey that water is the most important element in the world. It is a substance that exists in liquid, gas, and solid. Science, technology, and engineering need to work on this with more sensitivity. It will be more auspicious than beneficial only by understanding the environment around the earth made of water in totality. Water, food, health, climate change, etc. all types of security will be available on the whole earth. So let us work for beneficiary and security, this is our biggest challenge today. The task of restoring the health of nature will not only be done by scientists, social workers, and politicians via finding convenient solutions and making proper laws and regulations but also correct practical work must be applied to fix everything. For this, all of us have to work in perfect harmony with nature. By stopping fragmented research, there is a need to do research work by connecting it with totality.

It was also concluded in this meeting that, so far, the innovation journey had only gone to communities, social institutions, educational institutions, and schools, now next year in 2024 it should go to the best educational institutions of the world in one year. Because the journey emerges a new and deeper understanding that would be found through this way. On the other hand, a relationship of love and respect for nature will also become widespread among people, who will be interacted and communicated. Then those people will, hopefully, also start working towards the protection of the auspicious, along with their benefits. There is a need to move education towards learning. So go to the top 100 educational institutions in the world and advance the learning of natural nutrition. They will also have the culture of connecting with the totality of nature and then they will do further research by including their education in the totality of nature. The facts that have come to the fore in the innovation journey so far, will make a good starting book to present those facts to the world. We need to work so that the world can also learn from this experience. In the end, Jalpurush Rajendra Singh thanked to everyone before concluding the meeting.

After this meeting, the innovation journey was concluded by the chairmanship of Ashutosh Tiwari and the chief guest, the Mayor of Urlika, Wartil Ederson. You all will remember that, last year on August 27, 2022, the Institute of Advanced Materials, Urlika itself started the formation process of People's World Commission on Drought and Flood. Mr. Wartil Andersen said that, it is a matter of pride for me too that, last year, the process of finding a way to get rid of drought and flood was started from here itself.

Dr. Ashutosh ji while speaking on the occasion of concluding the innovation journey said that this is not the end of the journey. This is just the beginning of the next water wisdom process. On 27 August 2023, we are starting the journey from the Baltic Sea to the 100 best institutions of the world to inculcate water consciousness and flood-drought treatment. Only, the first phase of this journey is successfully completed.

At the conclusion of the innovation journey, Shreyansh explained to Mayor Vartil here in Swedish language that, 12 International World Water Conferences have been held in this period. 1st conference Udaipur India, 2nd Delhi India, 3rd Dhaka Bangladesh, 4th Shreemosekh Egypt, 5th New York USA, 6th California USA, 7th Salvador Brazil, 8th Nimli-Bhikampura India, 9th Mahavir Ji Karauli Rajasthan India, 10th Newberg Germany, 11th Dharwad in Karnataka, India, and finally 12nd Stockholm, Sweden. Along with this, two water and peace conferences were held – first at Narayan Dutt Tiwari Bhawan Delhi

In addition, 52 national level conferences were held and 9 conferences were organized in flood-prone areas. 102 understanding of groundwater recharge and 107 skill-developing workshops were organized. 260 public meetings were held to create a dialogue channel with the public. Thus, a total of 544 programs took place. More than 250000 people participated in these programs. This journey was about one million kilometers long because it, starting from Sweden, it traveled from India to Brazil, Australia, Portugal, Portugal to India, then America, New York in America, California, Los Angeles, Chicago, many and many countries in Europe, Germany, Denmark, Spain. Kenya, Somalia, Ethiopia in Africa as well as China, Tibet etc., circulated almost all over the world. In this information, it was learned that Tarun Bharat Sangh in India has also started physical work in countries like India, Mount Sinai, Egypt, South Africa, Kenya, California, Brazil etc.

In its conclusion, it is understood that modern education in the world has done natural exploitation very quickly with the help of technology, engineering, and science. That is why climate change happened and floods and droughts have started coming. Now to sensitize technology and engineering one must visit the world's highest educational institution. The second form of the journey will start from August 27 itself.

हम लोगों को जीवन देते हैं। और लोग हमें क्या देते हैं?

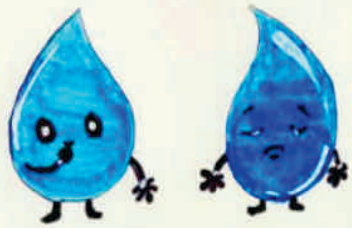

प्रदूषण

क्या वे लोग प्रदूषित करके जीवित रह पाएँगे?

बिल्कुल नहीं

तो वे हमारी स्वच्छता खराब क्यूँ कर रहे हैं?

उन्हीं से पूछो

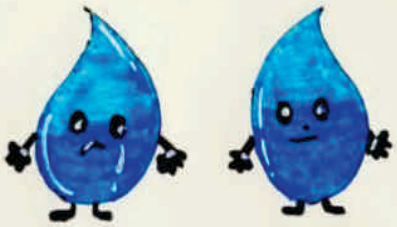

है प्रकृति का गहना जल,
जिंदगी का सार जल है,
इसको बचाना हर पल है,
बूंद बूंद करना संचय जल है!

यदि न हुआ संरक्षित जल,
तो मुश्किल होगा मिलना कल,
सोचना हर क्षण, हर पल है,
बूंद बूंद करना संचय जल है!

Nitya Soni
B.com, Azamgarh

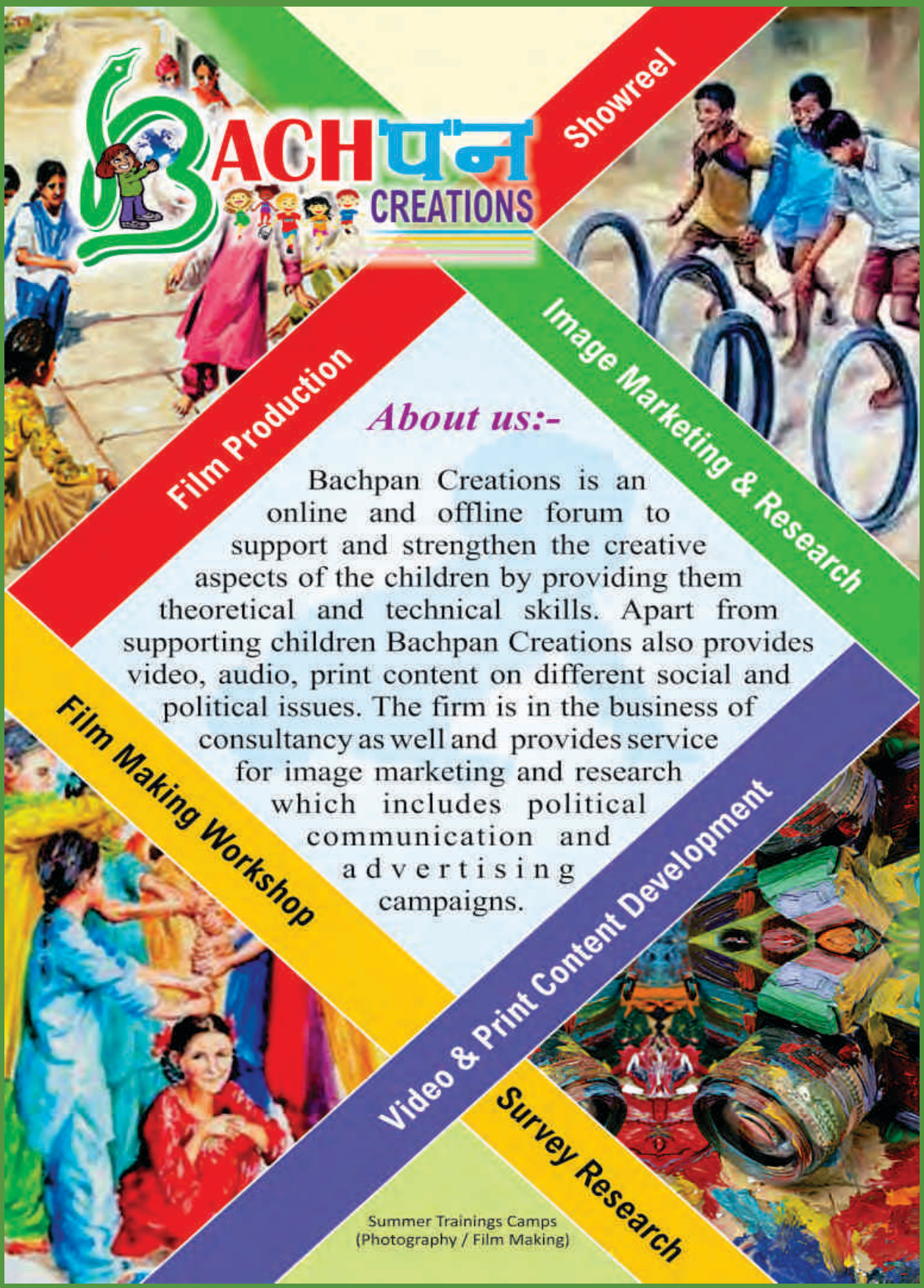

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें

हेड आफिस: ई–998, रत्नाकर खण्ड, शारदा नगर, रायबरेली रोड, लखनऊ

E-mail: bachpanexpress@gmail.com, www.bachpanexpress.com, Mob.: 9198255566, 9580803904